www.sukhiparivar.com

₹25

समृद्ध सुखी परिवार

अक्टूबर 2011

सुख-समृद्धि का पर्व है
दीपावली

महावीर के उपदेश और हमारा जीवन

कार्तिक मास में भक्ति करना श्रेष्ठ

नवरात्र में फलदायी है गायत्री साधना

गौरवपूर्ण और सर्वश्रेष्ठ पद है मां

सर्दी का मौसम और हमारा भोजन

Melini
LOUNGEWEAR

VASU CREATION

B-4/1626, RAI BAHADUR ROAD, LUDHIANA - 141 008

Phone No. 0161-2740154, 98142-62392

Mfrs. of PREMIUM RANGE OF GIRLS, LADIES & GENTS NIGHT WEARS

–: SPECIALISTS IN :–

LONG KURTA ❖ 3PC SET ❖ MATERNITY WEAR ❖ JIM WEAR ❖ CAPRI SET & SLEX SUIT

समृद्ध सुखी परिवार

सुखी और समृद्ध परिवार का मुखपत्र

वर्ष : 2 अंक : 9

अक्टूबर 2011, मूल्य : 25 रु.

मार्गदर्शक
गणि राजेन्द्र विजय

परामर्शक
मनीष जैन
अध्यक्षः सुखी परिवार फाउंडेशन

संपादक
ललित गर्ग
(9811051133)

लेआउट आर्टिस्ट
एम एस बोरा
(9910406059)

संपादक मंडल
दीपक रथ, मितेश जैन, चेतन आर. जैन, दीपक जैन-भायंदर, निकेश जैन, श्रेणिक एम. जैन-मुंबई, चंदू वी. सोलंकी-बैंगलोर, राजू वी. देसाई-अहमदाबाद, मुकेश अग्रवाल-दिल्ली, विपिन जैन-लुधियाना

वितरण व्यवस्थापक
बरुण कुमार सिंह
+91-9968126797
011-29847741

: शुल्क :
वार्षिकः 300 रु.
दस वर्षीयः 2100 रु.
पंद्रह वर्षीयः 3100 रु.

कार्यालय
ई-253, सरस्वती कुंज अर्पाटमेंट
25 आई.पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज
दिल्ली-110092
E-mail: lalitgarg11@gmail.com

महावीर की दृष्टि में जीने की कला का अर्थ

7

मानव जीवन और पशु जीवन में यही एक मुख्य भेद है कि पशु जीवन केवल प्रवृत्ति प्रधान है। उसमें क्रिया होती है, किन्तु चिंतन नहीं। जबकि मानवीय जीवन चिंतन प्रधान है। उसमें क्रिया होती है किन्तु चिंतनपूर्वक। विचार, मनन, ज्ञान यह मानवीय गुण है। मनुष्य जो कुछ करता है, पहले सोचता है। जो पहले सोचता है, उसे बाद में सोचना, पछताना नहीं पड़ता।

-गणि राजेन्द्र विजय

6	असारता का कारण	वल्लभ उवाच
6	जिंदगी का मकसद मानवता की सेवा हो	लियो टॉलस्टाय
8	तेरा दर्द न जाने कोय	अनिल कुमार
9	करवाचौथ पर वृहद् दृष्टि	ओम प्रकाश मंजुल
10	नवरात्र में फलदायी है गायत्री साधना	डॉ. रामसिंह यादव
11	लक्ष्मीजी एवं गणेशजी साथ क्यों?	मुरली कांठेड़
12	संस्कार शिक्षा के प्रणेता देवर्षि नारद	पी. डी. सिंह
13	आत्मा ही शिव है	राजेन्द्र बहादुर सिंह 'राजन'
14	तुलसी और बाल रोग	सुरेन्द्र अंचल
15	नींद की समस्या का समाधान	मुनि किशनलाल
16	लक्ष्मी का वाहन उलूक क्यों?	डॉ. ए. एल. श्रीवास्तव
17	समृद्धि और धन प्राप्ति का रहस्य	कौशल बंसल
18	दीपावलीः इतिहास के आइने में	गुंजन अग्रवाल
19	अहिंसा नम्रता की पराकाष्ठा है	मोहनदास करमचंद गांधी
19	तीन गुण	शिवचरण मंत्री
20	हंसना सबसे प्रभावी योग है	जितेन कोही
21	भारतीय संस्कृति और मूर्तिकला के महानायक परशुराम	ललित शर्मा
22	तनाव अच्छा सेवक है पर खतरनाक	रूपनारायण काबरा
23	न्यूमरोलॉजी में नंबर-8 का महत्व	नीता बोकाड़िया
23	राम नाम का आसरा	शीतल संत मुरारी बापू
26	सच की रोशनी	डॉ. निजामउद्दीन
26	गृहस्थ जीवन के कुछ योगायोग	पं. गिरीश कौशिक
27	दुख का मूल	आचार्य महाश्रमण
28	कार्तिक मास में भक्ति करना श्रेष्ठ	वृजेन्द्र नंदन दास
29	गौरवपूर्ण और सर्वश्रेष्ठ पद है मां	मंजुला जैन
30	मन को खाली रखो	आचार्य विजय नित्यानंद सूरि
31	हम सबका मालिक एक और खुदा की उंगली	संत राजिन्दर सिंहजी
31	स्वस्थ रहने के घरेलू नुस्खे	बेला गर्ग
32	सर्दी का मौसम और हमारा भोजन	डॉ. हीरालाल छाजेड़ 'जैन'
33	अपनी गैर-जिम्मेदारी, दूसरे की जिम्मेदारी!	पूरन सरमा
34	पंचभूत मतभेद नहीं रखते	कमलेश व्यास 'कमल'
35	श्रेष्ठ जीवन का मूलाधार	पं. श्रीराम शर्मा आचार्य
35	जानिए वास्तु से जुड़ी कुछ महत्वपूर्ण बातें	रामेश्वर प्रसाद
36	महावीर के उपदेश और हमारा जीवन	शिखरचंद जैन
36	धर्म का सार है-जियो और जीने दो	लाजपत राय सभरवाल
37	कर्म का अभ्यास	मृदुला सिन्हा
37	मैं का बोध	श्री आनंदमूर्ति
38	विरोध का तरीका और हमारी सोच	डॉ. के. के. अग्रवाल
39	लोकदेवता बाबा रामदेव की साधना स्थली रामदेवरा	पुखराज सेठिया
40	Ganesha, most popular deity	Ramnath Narayanswami
40	Live life with compassion	Purnima
41	Relativity is everything	Acharya Mahaprajna
41	Changing yourself	Jaggi Vasudev
42	एक उपचार प्रक्रिया ही तो है क्षमा	सीताराम गुप्ता
45	ठाकुर, तुम सरनाई आयो	उमा पाठक
46	योग है एक सुखद यात्रा	मनीष जैन

Published, Printed, Edited and owned by Lalit Garg from E-253, Saraswati Kunj Appartment, 25 I.P. Extn. Patpar-ganj, Delhi-110092. Printed at : Bookman Printers, A-121, Vikas Marg, Shakarpur, Delhi-110092.
Editor : Lalit Garg

आकर्षक कलेवर में धर्म, अध्यात्म, दर्शन, राष्ट्र, समाज तथा संस्कृति के चिंतन से परिपूर्ण पठनीयता सहेजे, 'समृद्ध सुखी परिवार' का अगस्त-2011 अंक प्राप्त हुआ। आज के भौतिकतावादी मशीनी दौर में मानवीय मूल्यों, संस्कारों, संवेदनाओं को जीवन देने का अद्वितीय प्रयास है यह पत्रिका। उस पर रचनाओं का संयोजन और संपादन कौशल सोने में सुहागा जैसा है। पत्रिका परिवार को हार्दिक साधुवाद।

–राजेन्द्र तिवारी
तपोवन, 38-बी, गोविंद नगर
कानपुर-208006 (उ.प्र.)

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका आरंभ से ही मुझे नियमित मिल रही है। लगभग एक वर्ष में ही इस परिवार केन्द्रित पत्रिका की उत्तरोत्तर और चहुंमुखी प्रगति आश्चर्यजनक है। कॉन्टेंट के साथ कंटेनर के महत्व को जानते हुए आपने उत्कृष्ट सामग्री के साथ बहुरंगी प्रस्तुति को भी ऐसा इन्द्रधनुषी बना दिया है कि पढ़ने से पहले, पन्नों को पलटते है। मैं तो ऐसा आकर्षित होता हूं कि एक बार पुन: इसकी बढ़िया छपाई, चित्र और उत्तम कागज को देखता हूं और उसके बाद ही पढ़ना शुरू करता हूं। मेरे यहां बहुत सारे मैगजीन आते हैं पर यह पत्रिका अपने शैशव में है। अनेक स्थापितों से टक्कर ले रही है। ललितजी, आपको इसके लिए बधाई। आपके नेतृत्व में इसके और ऊंचे शिखरों को छूने के बारे में मैं आश्वस्त हूं।

छोटी-छोटी रचनाओं से आपको विषय क्षेत्र व्यापक बनाने का लाभ तो अवश्य मिलता है पर कुछ विषय इतने गूढ़ भी होते हैं कि उनके साथ कुछ लंबी रचना के बिना शायद न्याय नहीं किया जा सकता। इसी तरह मूल्यों और आदर्शों का एक माध्यम लेख तो है ही, पर गंभीर चिंतन को भी कल्पना और काव्य के सहारे अधिक रुचिकर बनाया जा सकता है। अत: कविताओं के साथ ही कहानियों को भी अधिक स्थान देने पर भी विचार करें।

यह भी प्रशंसनीय है कि मानव और जीवन-मूल्यों को आपने किसी धर्म विशेष तक ही सीमित नहीं किया क्योंकि हर धर्म ही इन मूल्यों का पोषक है। इस क्रम में यदि संपादक मंडल में भी अधिक धर्मों का प्रतिनिधित्व हो तो यह पत्रिका के वास्तविक लक्ष्य का बेहतर प्रतिनिधित्व कर सकेगा।

–जयनारायण गौड़
आई.ए.एस.(से.नि.)
'हेमांचल', 54 मुक्तानन्दनगर
गोपालपुरा बाईपास, जयपुर (राजस्थान)

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका का जुलाई-2011 अंक मिला। संपादकीय में भ्रष्टाचार जैसे ज्वलंत मुद्दे पर सटीक टिप्पणी देखी। भ्रष्टाचार और कालेधन के सघनोत्तर तिमिर को सचमुच नैतिकता और राष्ट्रीय चरित्र का दीपक ही विनष्ट कर सकता है। गणि राजेन्द्र विजयजी एक सुबुद्ध विचारक और चिंतक है। आध्यात्मिकता के साथ वे समाज का उत्थान करने में संलग्न हैं और उसके लिए बहुआयामी प्रयास भी कर रहे हैं। उन्होंने मोक्ष की प्राप्ति के लिए विनयशीलता का महत्व विभिन्न दृष्टांतों द्वारा विद्वतापूर्वक दर्शाया है। गायत्री मंत्र का महत्व, यज्ञ-लाभ, शंख की महिमा, 'सुंदरकांड' का सौंदर्य-दर्शन, संस्कार आदि पर पठनीय सामग्री संजोयी गई है। इच्छामृत्यु और पराविज्ञान चिंतनशील लेख है। स्वास्थ्य-विषयक फलादि जनसाधारण के लिए उपयोगी जानकारी है। कविता-खण्ड भावुक हृदय की पहचान कराता है, यहां गीत, ग़ज़ल सभी कुछ है। नयनाभिराम तो है पत्रिका, ज्ञानवर्द्धक भी है।

–डॉ. निज़ामउद्दीन
मोहल्ला साज़गरीपोरा
श्रीनगर-190011 (कश्मीर

समृद्ध सुखी परिवार का सितम्बर-2011 अंक मिला। संपादकीय पढ़ने का लोभ संवर नहीं कर पायी। अभी पढ़ा। मैं आपसे सहमत हूं कि एक अरब इक्कीस करोड़ की आबादी का प्रतिनिधि करने वाला व्यक्ति वर्ष में एक दिन भी यदि हृदय के उद्‌गार को जनता से साझा ना कर सके लो इससे बड़ी लोकतंत्र की विडम्बना क्या होगी। पत्रिका की अन्य रचनाएं भी पठनीय है।

–सरोज जैन
डी-5/9, भूमितल, मॉडल टाउन
दिल्ली-110009

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका का अगस्त अंक मिला। इसका मुद्रण और साज-सज्जा पहले की तरह ही आकर्षक और प्रेरणादायक है तथा संकलित सामग्री अत्यंत रोचक, ज्ञानवर्द्धक और संग्रहणीय है। साधो सबद साधना कीजे-सुरेश पंडित, क्या मायन है राष्ट्रीयता के-डॉ. नरेन्द्र शर्मा 'कुसुम', मंगल मूर्ति दूर्वा-विद्या मिश्रा, आओ जीवन का सार बटोरें-श्री चंद्रप्रभ, भगवद्‌गीता में समता की अवधारणा-विश्वमोहन तिवारी, टूटते रिश्ते को कैसे बचाएं-डॉ. विनोद गुप्ता आदि के लेख मुझे विशेष रूप से अच्छे लगे। इसके

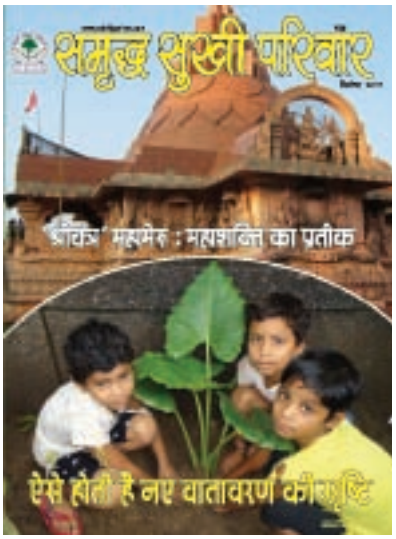

अतिरिक्त 'Thinking Positively', 'Bhakti is devotional love' शीर्षक लेख भी अत्यंत प्रेरणास्पद है। संकलित कविताएं भी मनको मोह लेती है। श्री केवल गोस्वामी की कविता 'नारी', सुधा गुप्ता 'अमृता' की 'गुलमोहर' और डॉ. सम्राट सुधा की ग़ज़ल भी मुझे विशेष रूप से अच्छी लगी।

–कृष्ण कुमार ग्रोवर
पूर्व सचिव, संसदीय राजभाषा समिति
एफ-बी/16, टैगोर गार्डन
नई दिल्ली-110027

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका का अंक-5 भी पूर्वांकों की भांति साहित्य, संस्कृति, संस्कार, अध्यात्म, धर्म, पुस्तक-समीक्षा, बोधकथा एवं अन्यान्य ज्ञानवर्द्धक सामग्री से भरपूर है। नारी में सृजन की अद्‌भुत क्षमता को चित्रित करता आपका संपादकीय अत्यंत महत्वपूर्ण है।

यह पत्रिका घर, परिवार, समाज और राष्ट्र को एक सूत्र में बांधने का सफल प्रयास तो करती ही है, साथ में वसुधैव कुटुम्बकम् का पाठ भी पढ़ाती है। पत्रिका का कला पक्ष और भाव पक्ष दोनों स्तुत्य है।

–राजेन्द्र बहादुर सिंह 'राजन'
रायबरेली (उ.प्र.)

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका हर महीने मिल रही है। वस्तुत: हर अंक कुछ नवीनता लिए होता है। अंक में विविध किन्तु सटीक लेखन सामग्री जो दिशाबोध होती है, पढ़कर आत्मतोष की अनुभूति होती है। सूझबूझ व सुंदर संपादन के लिए बहुत-बहुत बधाई।

–रमेश कोठारी
666/2, वास्तु निर्माण सोसायटी
रंगमंच के सामने, सेक्टर-22
गांधीनगर-382022 (राजस्थान)

इनके पत्र भी मिले–
आशीष दशोत्तर-रतलाम (म.प्र.), सुरेश आनंद-रतलाम (म.प्र.), श्याम नारायण श्रीवास्तव 'श्याम'-लखनऊ (उ.प्र.), जनार्दन शर्मा-सत्यसदन पुष्कर (राज.)

दीये की प्रेरणा है–मनुष्य जीवन बड़ी मुश्किल से मिलता है। कल पर कुछ मत छोड़िए। कल जो बीत गया और कल जो आने वाला है– दोनों ही हमारी पीठ के समान हैं, जिसे हम देख नहीं सकते। आज हमारी हथेली है, जिसकी रेखाओं को हम देख सकते हैं।

प्रकाश पर्व को सार्थक प्रणाम करें

इस वर्ष दीपावली पर दीये का मनुज के नाम संदेश है- देश का चरित्र बनाना है तथा स्वस्थ समाज की रचना करनी है तो हमें एक ऐसी आचार संहिता को स्वीकार करना होगा जो जीवन में पवित्रता दे। राष्ट्रीय प्रेम व स्वस्थ समाज की रचना की दृष्टि दे। कदाचार एवं भ्रष्टाचार के इस अंधेरे कुएँ से निकाले। बिना इसके देश का विकास और भौतिक उपलब्धियां बेमानी हैं। व्यक्ति, परिवार और राष्ट्रीय स्तर पर हमारे इरादों की शुद्धता महत्व रखती है, जबकि हमने इसका राजनीतिकरण कर परिणाम को महत्व दे दिया। घटिया उत्पादन के पर्याय के रूप में जाना जाने वाला जापान अपनी जीवन शैली को बदल कर उत्कृष्ट उत्पादन का प्रतीक बन विश्वविख्यात हो गया। हांगकांग एवं सिंगापुर ने गहरी जमीं भ्रष्टाचार की नींवों को उखाड़ फेंका- ये राष्ट्रीय जीवन शैली की पवित्रता एवं जिजीविषा की रोशनी के प्रतीक है।

इस वर्ष दीये को दिखाई दे रहा है- हर आंख में रौशन नए भारत का स्वप्न! नई पीढ़ी हो या बुजुर्ग, सब चाहते हैं- देश सार्थक बदलाव की ओर बढ़े। नैतिक मूल्यों के पतन का उन्हें दुख है, वहीं भ्रष्टाचार, अपराध और दिशाहीन राजनीति को लेकर वे चिन्तित भी है। लेकिन एक बात पर सब सहमत है-देश की शान और भाईचारा बरकरार रहे।

दीया चाहता है- हम जीवन से कभी भी पलायन न करें, जीवन को परिवर्तन दें, क्योंकि पलायन में मनुष्य के दामन पर बुजदिली का धब्बा लगता है, जबकि परिवर्तन में विकास की संभावनाएं सही दिशा और दर्शन खोज लेती है और इसी परिवर्तन को हमने अन्ना के अनशन के दौरान देखा। सोचने वाली बात तो यह है कि ईमानदार प्रयत्नों का सफर कैसे आगे बढ़े जब शुरूआत में ही लगने नगे कि जो काम मैं अब तक नहीं कर सका, भला दूसरों को भी हम कैसे करने दें? कितना बौना चिन्तन है आदमी के मन का कि मैं तो बुरा हूं ही, पर दूसरा भी कोई अच्छा न बने। तथाकथित राजनीति एवं राजनीतिक लोगों की इस सोच को चुनौती देते हुए अन्ना रूपी बदलाव की आंधी में हर हिन्दुस्तानी सोचने लगा है कि देश के में निर्माण हमारी सहभागिता कितनी और किस हद तक हो सकती है, उसके लिये हम तैयार हैं। जीवन में टर्निंग प्वाइंट शब्द जरूरी है। अलार्म बज चुका है, अब यह हमारे हाथ में है कि जाग जाएं या फिर अलार्म बंद करके हमेशा के लिये गहरी नींद में सो जाएं।

दीये की प्रेरणा है-मनुष्य जीवन बड़ी मुश्किल से मिलता है। कल पर कुछ मत छोड़िए। कल जो बीत गया और कल जो आने वाला है- दोनों ही हमारी पीठ के समान हैं, जिसे हम देख नहीं सकते। आज हमारी हथेली है, जिसकी रेखाओं को हम देख सकते हैं। हमारा जीवन दिशासूचक बने। गिरजे पर लगा दिशा-सूचक नहीं, वह तो जिधर की हवा होती है उधर ही घूम जाता है। कुतुबनुमा बने, जो हर स्थिति में सही दिशा बताता है।

सन रत्जु का मानना है कि जो रणभूमि में पहले पहुंच कर दुश्मनों का इंतजार करता है वह जीतता है। आज देश भी एक रणभूमि बन चुका है, अन्ना जैसे सैनिक डटे है और उनको इंतजार है भ्रष्टाचार, कालेधन, राजनीतिक अपराध जैसे दुश्मनों के सर्वनाश का। उन्होंने दुश्मनों की इच्छाशक्ति को अपने ऊपर हावी नहीं होने दिया है बल्कि उन्होंने अपनी इच्छाशक्ति उन पर लाद दी है। यही विजयी होने का लक्षण है और इस तरह की लड़ाइयां इच्छाशक्ति से ही जीती जाती है।

जब अन्ना हजारे को अनशन के लिये निकलते ही गिरफ्तार कर तिहाड़ जेल भेजा गया तो किसी की प्रतिक्रिया आयी कि आज महात्मा गांधी जीवित होते तो कांग्रेस सरकार उन्हें जेल भेज देती। एक दूसरी प्रतिक्रिया यह भी आयी कि आज के युग में तो बापू भी भ्रष्टाचार से अछूते नहीं रहते। हो सकता है कि आज के तथाकथित गांधीवादियों को अन्ना की जागृति अच्छी नहीं लगी लेकिन यह जागृति देश के नग्न सत्य यानी भ्रष्टाचार के खिलाफ एक आह्वान था, प्रेरणा थी। यद्यपि गोडसे ने तो गांधीजी की शारीरिक तौर पर हत्या की लेकिन उनकी विचारधारा की हत्या उन्हीं लोगों ने की है और बार-बार की है जो खुद को उनका उत्तराधिकारी ही नहीं बल्कि उनके सिद्धान्तों पर चलने का दावा पानी पी-पी कर करते नहीं थकते। अन्ना के आन्दोलन को कुचलने के लिये इन लोगों ने जो हथकंडे अपनाएं वह घटनाक्रम अपने आप सब कुछ कह देता है। इतना ही नहीं खुफिया एजेंसियों के जासूस अन्ना के गांव रालेगांव सिद्धि में उनकी हर गतिविधि पर नजर रख रहे हैं, ये जासूस कभी परम्परागत किसान बन कर तो कभी ग्वाला बनकर तो कभी संन्यासी का भेष धारण कर अन्ना पर निगरानी रख रहे हैं। देश में हो रही आतंकवादी घटनाओं पर तो सरकार का जोर चलता नहीं, आतंकवादी हर पहली घटना की तुलना में नयी घटना को ओर अधिक सफलता से अंजाम दे जाते हैं और सरकार उंघती रहती है, जहां उसे क्षमताओं को दिखाना चाहिए वहां नहीं दिखाती और जहां नहीं दिखाना चाहिए वहां दिखाती है। यह सरकार की बौखलाहट का नतीजा है। सरकार अपने पतन को प्रवाह को रोकें। 'दीए तले अंधेरा' की कहावत राजनीतिक जीवन के दोहरेपन पर एक करारा व्यंग्य है।

दीपावली के दिन हम घर की ऊंची मीनारों पर दीयों की जगमगाती कतारें खड़ी करें या न करें मगर एक दीया देश के नाम वफादारी का अवश्य अपने भीतर जला दें ताकि प्रकाश के पर्व को सार्थक प्रणाम कर सकें।

वल्लभ उवाच

असारता का कारण!

''असारता प्रकृति का एक लक्षण है। क्योंकि अमर तो केवल धर्म है, आत्मा है या ईश्वर है या, वे शिक्षाएं, दीक्षाएं या सिद्धांत हैं जो दैविक वरदान हैं प्रकृति के।

जो जन्म लेते हैं, नश्वर भी हैं, जिनका जन्म है, मृत्यु अवश्य है, इसलिये जब चराचर जीव का अंत नश्वरता में है तो प्रश्न उठाते हैं बुद्धिजीवि कि फिर विश्व में रहा क्या बाकी?

भाई! जीवन तो जीवन है, जीवन में कर्तव्य निभाना, धर्म निभाना और अपना-अपना कर्म करना तो आवश्यक है, फिर जीवन के साथ जो प्रपंच जुड़े हुए हैं.....

मोह, माया, ममता, रागद्वेष, कलह आदि का आवरण है, उनके बंधनों से जब मानव तंग आ जाता है तो वह अपने आपको मानवता से अलग थलग कर लेता है, और उसे एक ज्ञान प्राप्त होता है, वह है असारता का ज्ञान।

असारता का ज्ञान एक बौद्धिक ज्ञान है, सांसारिक नहीं। इसके द्वारा त्याग भावना का उदय होता है। विश्व के प्रति एकरूपता की भावना आती है।

विश्व कल्याण का मार्ग प्रशस्त होता है, क्योंकि असारता.....

मानव में बोध उत्पन्न करती है, भगवान महावीर, बुद्ध आदि इसका ज्वलंत उदाहरण हैं।

परंतु.....

''आज का दार्शनिक इस असारता को मानव की कायरता और मूर्खता कहता है, यह आज के युग की एक मूर्खता पूर्ण विचारों की विडम्बना है, दलील दी जाती है कि.....

''संसार को असार समझ कर अपने कर्तव्यों से विन्मुख हो भागता वैराग्य धारण करना कायता का लक्षण नहीं तो और क्या?

भाई! धन की लोलुपता मानव को पाप मार्ग पर डालती है।

स्त्री का सहयोग वासना को जन्म देता है, संबंधियों का मोह मस्तिष्क को पीड़ित करता है, कषायों का प्रेम, हर वस्तु से आकर्षण मानव को माया जाल में जकड़ता है.....

जब अंत तो निश्चित है, तो फिर इन सबकी असारता से विमुख हो मानव आत्म कल्याण या ईश भक्ति का मार्ग अपनाए तो क्या इसे कायरता कहेंगे आप?

कुछ दार्शनिक कहते हैं-''कि भोगों के बीच रह कर भी योगी रहे, वही वीर है।''

हो सकता है, आपका वैज्ञानिक युग आग और पैट्रोल को एक साथ रखने में समर्थ हो जाए?

परंतु प्रत्यक्ष में आग लगेगी ही, धुंआ होगा ही, विस्फोट भी निश्चित हैं।

अंत तो है ही।

जिन्दगी का मकसद मानवता की सेवा हो

लियो टॉलस्टॉय

महान लेखक लियो टॉलस्टॉय का जन्म 9 सितम्बर 1828 को रूस के एक रईस परिवार में हुआ। वह सेना में भर्ती हुए और लड़ाई में भी हिस्सा लिया लेकिन जल्द ही सेना छोड़कर लेखन में जुट गए। उनका नॉवेल वॉर एंड पीस और अन्ना करेनिना को क्लासिक का दर्जा हासिल है। मन की शांति की तलाश में 1890 में उन्होंने अपनी दौलत का त्याग कर दिया और गरीबों की सेवा के लिए परिवार छोड़ दिया। 20 नवम्बर 1910 को उनका देहांत हो गया।

- जिंदगी का इकलौता मकसद मानवता की सेवा होना चाहिए।
- जब छोटे बदलाव होते हैं, तभी असली जिंदगी जी जाती है।
- अगर अच्छाई, सचाई और सरलता नहीं है तो महानता भी नहीं है।
- यह जाने बगैर कि आप कौन है और यहां क्यों हैं, जिंदगी नामुमकिन है।
- खुशहाल परिवार में सब एक-दूसरे जैसे लगते हैं, जबकि नाखुश परिवार में सबकी राह जुदा होती है।
- और ज्यादा पाने की ख्वाहिश ही बोरियत है।
- हर कोई दुनिया बदलना चाहता है लेकिन कोई भी खुद को बदलना नहीं चाहता।
- मौत के साये में भी दो और दो छह नहीं होते।
- कुछ लोगों में मौजूद हिंसा तकलीफ या मौत का डर दिखाकर दूसरे लोगों को वह करने पर मजबूर करती है, जो वे करना नहीं चाहते।
- जो भी लोग जिंदा है, इसलिए नहीं कि वे अपनी परवाह करते हैं, बल्कि इसलिए कि दूसरे लोग उनसे प्यार करते हैं।
- अगर आप खुश रहना चाहते हैं तो बस रहें। इसके लिए खास कोशिश नहीं करनी पड़ती।
- खुश रहने की पहली शर्त यह है कि इंसान और कुदरत के बीच का रिश्ता टूटे नहीं।
- इंसान को पावर से प्यार होगा, तभी वह उसे हासिल कर पाएगा और अपने पास बनाए रख सकेगा।

'समृद्ध सुखी परिवार' मासिक पत्रिका निम्न वेबसाइट पर भी उपलब्ध है:
www.sukhiparivar.com
www.herenow4u.net
www.checonjainam.org

दिशाबोध

गणि राजेन्द्र विजय

महावीर की दृष्टि में जीने की कला का अर्थ

जीवन जीने की कला के मर्मज्ञ आचार्य विनोबा भावे ने एक बार जीवन की परिभाषा करते हुए कहा था- रसायन शास्त्र की भाषा में पानी का सूत्र है- H_20 (एचटूओ) यानी दो भाग हाइड्रोजन और एक भाग ऑक्सीजन मिलकर पानी बनता है। इसी प्रकार जीवन का सूत्र है M_2A (एमटूए) दो भाग मेडिटेशन (चिंतन-मनन) और एक भाग एक्टिविटी (प्रवृत्ति)।

मानव जीवन और पशु जीवन में यही एक मुख्य भेद है कि पशु जीवन केवल प्रवृत्ति प्रधान है। उसमें क्रिया होती है, किन्तु चिंतन नहीं। जबकि मानवीय जीवन चिंतन प्रधान है। उसमें क्रिया होती है किन्तु चिंतनपूर्वक। विचार, मनन, ज्ञान यह मानवीय गुण है। मनुष्य जो कुछ करता है, पहले सोचता है। जो पहले सोचता है, उसे बाद में सोचना, पछताना नहीं पड़ता। वह खूब सोच-विचार कर, समझकर अपनी प्रवृत्ति का लक्ष्य निश्चित करता है। प्रवृत्ति की प्रकृति निश्चित करता है और प्रवृत्ति का परिणाम भी। इसके पश्चात ही वह प्रवृत्ति करता है। इस प्रकार मानव की प्रत्येक प्रवृत्ति/एक्टिविटी में पहले चिंतन-मनन अर्थात् मेडिटेशन किया जाता है। जीवन के इस सहज नियम को भगवान महावीर ने 'पठमं नाणं तओ दया' के सरल सिद्धांत द्वारा प्रकट किया है। भगवान महावीर का दर्शन क्रियावादी दर्शन है। वह क्रिया, प्रवृत्ति और पुरुषार्थ में दृढ़-विश्वास रखता है। किन्तु क्रिया के साथ ज्ञान का संयोग करता है।

'आहंसु विज्जा चरणं पमोक्खं' विद्या और आचरण के मिलन से ही मुक्ति होती है। साधु के लिए, आचार्य के लिए जो विशेषण आते हैं, उसमें एक मुख्य विशेषण है- विज्जाचरण संपन्ना या विज्जा चरण पारगा। अर्थात् ज्ञान और क्रिया से संपन्न एवं क्रिया के संपूर्ण भावों को जानने वाले।

इससे पता चलता है कि भगवान महावीर का क्रियावाद ज्ञानयुक्त क्रियावाद है। अज्ञान या अविवेक पूर्वक की गई 'क्रियावाद' नहीं है, वह 'अज्ञानवाद' या मिथ्यात्व है। जिसकी दृष्टि स्पष्ट है, जिसका विवेक जागृत है जो अपने द्वारा होने वाली प्रवृत्ति के परिणामों पर पहले ही विचार कर लेता है वह ज्ञानी है। भगवान कहते हैं- णाणी नो परिदेवए-वह ज्ञानी कर्म करके फिर शोक या चिंता नहीं करता इसलिए-णाणी नो पमायए। ज्ञानी कभी अपने आचरण में/अपनी प्रवृत्ति में प्रमाद नहीं करता। न तो वह आलस्य करता है और न ही नियम विरुद्ध आचरण। सलिए ऐसे ज्ञानी को, चिंतनशक्ति को कोई उपदेश या शिक्षा की भी जरूरत नहीं रहती। उद्देसो पासगस्स णत्थि। जो स्वयं द्रष्टा है, जो अपना मार्ग स्वयं देखता है, उसे क्या किसी दूसरे मार्गदर्शक की जरूरत रहती है? किमत्थि उवाही पासगस्स? न विज्जइ-क्या विचारशील, विवेकशील द्रष्टा को कभी उपाधि, परेशानी या चिंता होती है? नहीं होती।

भगवान महावीर का यह चिंतन हमें जीवन का सबसे पहले नियम समझाता है कि जो करो, वह विवेकपूर्वक करो।

दूसरी बात वे अपने ज्ञान को दूसरों पर नहीं थोपते हैं, किन्तु उसी के भीतर ज्ञानदृष्टि जगाते हैं। उसे स्वतंत्र चिंतन, स्वतंत्र विचार करने का अवसर देते हुए कहते हैं-मइमं पास-हे मतिमान, तू स्वयं विचार कर, मैंने कहा है, इसलिए तू मानने को बाध्य नहीं है। किन्तु अपनी बुद्धि की तुला पर तोलकर इसकी परीक्षा कर और फिर विश्वास कर। महावीर का यह कथन मानव की बुद्धि पर, उसकी विचार-क्षमता पर गहरा विश्वास प्रकट करता है।

आज हमारे जीवन में चिंतन की, जागृति की, विवेक की कमी आ रही है। हम जो कुछ कर रहे हैं, उसके पीछे या तो परम्परा की लीक पीटी जाती है या रूढ़ि के रूप में हम बिना विचारे ही करते जाते हैं या लोक दिखावे के रूप में प्रवाह में बहते जाते हैं। इसलिए हमारे क्रिया-कलापों में, धार्मिक कहे जाने वाले क्रियाकांडों में न तो तेजस्विता होती है और न ही हृदयस्पर्शिता होती है। विचार शून्य क्रिया हमारे आचरण को प्रभावशाली नहीं बना सकती और न ही कोई जीवन में परिवर्तन ला सकती है।

जिस क्रिया व आचार के पीछे विचार नहीं है, उससे अच्छे परिणाम की क्या आशा की जा सकती है। इसलिए भगवान महावीर का यह सबसे प्रमुख जीवन सूत्र है- तत्व भगवया परिण्णा पवेइया-भगवान ने यह प्रज्ञा, विवेक, विचार बताया है कि जो भी काम करो, पहले उसका चिंतन-मनन करो, विवेक करो। विवेक की रोशनी हमारे कर्म को चैतन्य और परिणामकारी बनायेगी।

भगवान महावीर का दूसरा महत्वपूर्ण जीवन सूत्र है- सया सच्चेण सम्पन्ने। सदा सत्य से जुड़े रहो। सच्चे तत्थ करेज्जुवक्कमं। जो सत्य हो, उसमें पुरुषार्थ करो, पराक्रम करो। सत्य ही संसार में मूल-शक्ति है। इसलिए सच्चस्स आणाए उवट्ठिए स मेहावी मारं तरइ। जो बुद्धिमान सत्य का आधार लेकर चलता है, सत्य का पक्ष लेता है या जीवन में सत्य का सहारा लेता है वह सब प्रकार के भयों को जीत लेता है। सब प्रकार के कष्टों से पार पहुंच जाता है। यहां तक कि मृत्यु को भी जीत लेता है।

भगवान महावीर के सामने गौतम गणधर आते हैं। वे कहते हैं- भंते! आनंद श्रावक कहता है, उसे ऐसा अपूर्व अवधि ज्ञान हुआ है जिससे वह विशाल क्षेत्र को देख सकता है। परन्तु मैंने उसे कहा है, ऐसा विशाल अवधिज्ञान श्रावक को नहीं हो सकता है, तुम्हें असत्य का दोष लग रहा है। भंते! क्या मेरा कथन सत्य है या आनंद श्रावक का कथन सत्य है?

भगवान कहते हैं-''गौतम! आनन्द श्रावक का कथन सत्य है। तुमने उसके ज्ञान का अपलाप करके उसकी अवहेलना की है। अतः जाओ उसे खमाओ।'' गौतम तुरंत जाते हैं और आनन्द श्रावक को खमाते हैं। अपनी भूल के लिए पश्चाताप करते हैं।

भगवान सत्य के पक्षधर थे। एक श्रावक के सत्य कथन का अपलाप

करने पर अपने प्रमुख शिष्य गणधर को भी उसके पास भेजकर क्षमा मांगने को कहा। यह घटना बताती है, सत्य के सामने कोई छोटा-बड़ा नहीं। सत्य महान है। सत्य ही भगवान है।

कहते हैं सत्य कड़वा होता है। सुनने में, बोलने में सत्य कभी-कभी कठोर व अप्रिय लगता है। इसलिए भगवान महावीर सत्य को मानते हुए भी सत्य के साथ माधुर्य का योग करते हैं। भगवान कहते हैं- मासियव्वं हियं सव्वं-सत्य तो बोलो परन्तु वह हितकारी हो, प्रिय हो, मधुर हो। सत्य सुनकर किसी का हृदय दुखी न हो, किसी के मन पर आघात नहीं लगे इस बात का भी पूरा ध्यान रखना है।

एक तरफ प्रभु सत्य के पूर्ण पक्षधर हैं तो साथ ही लोक नीति व लोक-व्यवहार को भी महत्व देकर चलते हैं। इसलिए सत्य के साथ लोक नीति को जोड़ने की बात कहते हैं- सच्चं पि होइ अलियं जं पर पीडाकरं क्यणं। जिस सत्य वचन को सुनकर किसी के हृदय पर चोट लगती है, दूसरों को पीड़ा होती है, ऐसा सत्य वचन असत्य की कोटि में है। वह सत्य, सत्य नहीं जो दूसरों के हृदय पर घाव कर दे। जो सत्य कठोर हो, जिसके सुनने से सुनने वाले का मन खिन्न व दुखी हो जाता है, ऐसा सत्य वचन मत बोलो।

भगवान महावीर का प्रमुख श्रावक है- महाशतक। अपनी पौषधशाला में बैठा है, जीवन की अंतिम आराधना करता है उसे अवधिज्ञान हो जाता है। अपनी आराधना में लीन है, तभी उसकी पत्नी रेवती उसके साथ अत्यंत अभद्र दुर्व्यवहार करती है। बड़े ही अश्लील वचन बोलती है, जिन्हें सुनते, सहते महाशतक का धैर्य जवाब दे जाता है। तब वह उससे कहता है- रेवती! तू इस प्रकार के दुराचरण के कारण घोर रोगों के शिकार होगी और अंत में मरकर प्रथम नरक में जायेगी। वहां भयंकर यातनाएं भोगेगी।

पति का यह वचन सुनकर रेवती उद्भ्रांत हो जाती है- पति ने मुझे शाप दे दिया। इस प्रकार वह भयभीत होकर आकुल-व्याकुल होकर इधर-उधर भागती है। आकुलता से छटपटाती है। छाती पीटती है।

दूसरे दिन प्रातः भगवान महावीर गणधर गौतम को कहते हैं- गौतम! तुम जाओ और श्रावक महाशतक से कहो, उसने अपनी भार्या रेवती को पौषध में जो कठोर कर्कश वचन कहे हैं, उन्हें सुनकर हृदय व्यथित हो उठा है। भले ही सत्य वचन हो, परन्तु श्रावक को इतना कठोर, दूसरों के हृदय को पीड़ा पहुंचाने वाला वचन नहीं बोलना चाहिए। महाशतक से कहो वह इसकी आलोचना प्रायश्चित करे।

भगवान महावीर सर्वज्ञ थे। वे भूत-भविष्य के ज्ञाता थे। परन्तु इस विशिष्टता से हटकर हम उनकी जीवन-दृष्टि पर विचार करें तो यह एक सत्य उजागर होता है कि वे व्यक्ति के भीतर छिपी असीम संभावनाओं को देखते थे। उनको उद्घाटित करते थे। बीज के भीतर वट बनने की क्षमता का ज्ञान तो सभी को है परन्तु उस क्षमता का सम्मान करना और उसे उद्घाटित करने का अवसर प्रदान करना, यह जीवन-दृष्टि किसी-किसी के पास ही होती है।

अन्तकृद्दशा सूत्र में एक प्रसंग है। जब अतिमुक्तक कुमार श्रमण भावनाओं में बहकर पानी में अपनी नाव तिराता है और स्थिवर आकर भगवान से उसकी शिकायत करते हैं-भंते! आपका बाल-शिष्य तो वर्षा के पानी में नाव तिराता है। वह अभी अबोध हैं तब भगवान अतिमुक्तक कुमार को कुछ नहीं कहते, न ही किसी प्रकार का प्रायश्चित देते हैं, न ही डांटते हैं किन्तु स्थविर श्रमणों को ही कहते हैं-"हे श्रमणों तुम इस बाल मुनि की अवज्ञा मत करो। इसकी अवहेलना मत करो, यह बहुत सरल आत्मा है। इसी भव में मोक्ष जाने वाला चरण शरीरी हैं इसलिए उसे खमाओ इसको जो कटु वचन कहे हैं। उसके लिए क्षमा मांगो।"

यह है बीज में वट की असीम संभावना का दर्शन। वे बालमुनि के भीतर छिपी चरम शरीरी की श्रेष्ठता का दर्शन कराते हैं। उसकी सरलता और सहजता का सम्मान करते हैं। वर्तमान में भविष्य को देखते हैं और उज्ज्वल भविष्य को उद्घाटित करते उसे संयम में उत्साहित करते हैं और साधना में सतत आगे बढ़ने की प्रेरणा देते हैं।

ज्ञाता सूत्र में मेघकुमार का प्रसंग है-जब वह रात भर नींद नहीं आने के कारण विचलित हो जाता है और साधु जीवन छोड़कर वापस अपने राजमहलों में लौट जाने के लिए भगवान के पास आता है तो भगवान उसके भीतर की आकुलता को समझते हैं, छटपटाहट पहचानते हैं। परन्तु उसकी अधीरता को प्रताड़ित नहीं करते। उसे कठोर या अप्रिय शब्दों से लांछित नहीं करते, किन्तु उसके भीतर छिपी संवेदना को, सहिष्णुता को जगाते हैं। कुछ भी नहीं कहकर उसे उसका हाथी का पिछला भव सुनाते हैं। बस, अपना पूर्व जीवन सुनकर वह जागृत हो उठता है। अपनी भूल पर पश्चाताप करता है और भगवान के चरणों में पुनः स्वयं को समर्पित कर देता है। यह प्रसंग बताता है कि महावीर मनोविज्ञान की दृष्टि से प्रत्येक व्यक्ति को भीतर से टटोलते थे, उसकी भावनात्मक चेतना को, मूर्च्छित चेतना को जगाकर उसे स्वयं ही जागृत होकर आगे बढ़ने का अवसर प्रदान करते थे।

इस प्रकार की अलौकिक जीवन दृष्टि ने सैकड़ों हजारों व्यक्तियों का भविष्य संवारा है। पापी हत्यारे अर्जुनमाली में क्षमता वीर क्षमण की तस्वीर देखते हैं। क्रूर, उग्र विषधर चंडकौशिक की जहरीली फुंकारो में भी वे उसके कल्याण की संभावना सुनते हैं। ■

तेरा दर्द न जाने कोय

अनिल कुमार

आदमी खुश रहना चाहता है और इस खुशी के लिए वह योग, ध्यान, पूजा, दान जैसे आध्यात्मिक अनुष्ठान के साथ, भौतिक संसाधनों से भी इसे प्राप्त करना चाहता है। पर अपनी खुशी को कई बार वह जीव-जंतुओं से इस प्रकार प्राप्त करना चाहता है कि वह खुश हो न हो, जीव सदा के लिए दुखी हो जाता है।

सांप की पिटारी वाला, उससे और लोगों को खुश करता है, यह साधन उसके आमदनी का जरिया भी बन जाता है, पर उस सांप को कैसा लगता होगा, जो अपना स्वाभाविक जीवन छोड़कर घुट-घुट कर जीता है। मदारी वाला भी बंदर को डंडे के बल पर नाच सिखाता है, लोग खुश होते हैं-ताली बजाते हैं, मदारी पैसा इकट्ठा करता है, पर बंदर? इसी प्रकार खरगोश, सफेद चूहा, कछुआ, बतख, तोता-मैना आदि बाध्य जीवन जीने को मजबूर होते हैं। ऐसे जीवों में कुत्ते की दशा निश्चित रूप से बेहतर और भौतिकता संपन्न है, शायद इसलिए कि वह आदमी को सुरक्षा की खुशी देता है, पर क्या वह कार में घूम कर खुश है? सबसे ज्यादा दुख होता है जब मैं किसी पिंजरे में बंद तोता और मैना को देखता हूं। आदमी को इससे क्या खुशी मिलती होगी, जब वह किसी के पंख कुतर देता है, यह एक प्रकार की हिंसा है। पक्षी तड़फता रहे, सलीकों से टकराता रहे और आदमी उसे कटोरी में दूध-भात देकर मनचाहा रटवाता रहे। बेचारा तोता कितना कोसता होगा? उसके लिए आदमी की यह निकटता कितनी कष्टप्रद लगती होगी?

आदमी अपनी खुशी के लिए इन बेजुबानों को सताना कब छोड़ेगा? एक कविता याद आ रही है-

हम पक्षी उन्मुक्त गगन के, पिंजरबद्ध न गा पायेंगे।।
कनक तीलियों से टकराकर, कोमल पंख टूट जायेंगे।।

तीज-त्यौहार

ओम प्रकाश मंजुल

करवाचौथ पर वृहद् दृष्टि

भारत में नारियों को सदैव से गरिमामय स्थान प्राप्त है। इसीलिए यहां कुछ व्रतोत्सव मात्र महिलाओं के लिए ही बनाये गये हैं। जैसे- भैयादूज, हरियाली तीज आदि। इन्हीं में से कार्तिक कृष्ण-चौथ को मनाया जाने वाला व्रत करवाचौथ है।

महिलाएं करवाचौथ का व्रत अपने पतियों के उत्तम स्वास्थ्य एवं दीर्घ-जीवन के लिए रखा करती है। कुमारिकायें भी कुछ परिवर्तित औपचारिकताओं के साथ अपने श्रेष्ठ जीवनसाथी की प्राप्ति एवं उसके स्वरूप व दीर्घ आयुष्य की कामना लेकर 'करवाचौथ' का व्रत एवं पूजन किया करती है। इस दिन नारियां चावलों की पिष्टी से घर की दीवार पर पति के चित्रों की प्रतिनिधि चित्र-विचित्र तस्वीरें, जिन्हें 'वर' कहा जाता है, बनाती है। इसके साथ ही वे पूजा के लिए चंद्रमा के साथ ही अन्य देवी-देवताओं के भी चित्र बनाती हैं। वे दिन भर निर्जला व्रत रहती हैं और रात्रि में चन्द्रोदय होने पर चंद्रमा की आरती उतारते हुए चंद्र दर्शन और चंद्र अर्घ्यदान करने के बाद ही भोजन ग्रहण करती है। उस दिन विशेषत: पूरी-पकवान ही बनाये जाते हैं। स्त्रियां चंद्र-पूजन के समय पैरों में महावर लगायी हुई होती हैं तथा नये वस्त्राभूषणों में पूर्ण श्रृंगार में होती है।

गौरतलब है, ईसाइयत में भी एक त्योहार 'करवाचौथ' की तर्ज पर मनाया जाता है, जिसका नाम है- श्जेम म्अम वि जण ।हदमेश (संत एगनेस की शाम) यह पर्व प्रतिवर्ष 21 जनवरी की मध्य रात्रि तक मनाया जाता है। एगनेस अतीव सुंदर कन्या थी। (लैटिन चर्च में 'सेंट एगनेस' को 'कन्या संत-शहीदों' में महत्वपूर्ण पद प्राप्त है) उसने 13 वर्ष की आयु में ही अविवाहित रहने का संकल्प लिया था। सैनिक अधिकारी सैम्प्रोनियस के लड़के ने उससे बलात विवाह करना चाहा। एगनेस के द्वारा विरोध किये जाने एवं यह कहे जाने पर कि उसने जेसस से शादी कर ली है, सैम्प्रोनियस उसे पकड़कर चकलाघर ले गया, जहां फौजी दरिन्दों ने उसके वस्त्रों को नोचकर तार-तार किया। पर, एगनेस के बाल इस ढंग से फैल गये कि उसके लज्जास्पद अंग, ढके रहे। उसने ईशु से प्रार्थना की। फलत: ऊपर से उसके ऊपर एक जगमग श्वेत्र वस्त्र गिरा जिससे उसने संपूर्ण शरीर को ढका। कुछ ही क्षणों बाद कुपित्र सैम्प्रोनियस का कुपुत्र पुन:उसके पास बलात् व्यवहार करने के लिए आया। एगनेस के अलौकिक श्वेत वस्त्र से निसृत चकाचौंध से वह अंधा हो गया और उसके शरीर को भी लकवा मार गया। सैम्प्रोनियस के संबंधियों द्वारा विनय और विलाप किये जाने पर एगनेस ने दयालु होकर अपने चमत्कार से उसे चंगा कर दिया। अब एगनेस सैम्प्रानियस के चंगुल से तो छूट गई, पर भीड़ उसे जादूगरनी समझकर उसे मार डालने के लिए आमादा थी। कुछ लोगों ने उसे खूंटे से बांधकर उसके शरीर में आग लगाई, पर वह तो प्रह्लाद की भांति बच गई, जबकि आग लगाने वाले सिंहिका के समान जल गए। अंत में एक सैनिक की तलवार ने उसे शहादत अता की। यह 21 जनवरी 304 ई. का दिन था उसे 'वायानांमेटना' नामक स्थान पर दफनाकर समाधि बनायी गई। सेंट एगनेस की देह तो यहीं खत्म हो जाती है, पर उनके चमत्कारों और एगनेस की कहानी से जुड़ी हुई कहानियों की लम्बी कहानी आगे भी है। पर, विस्तार भय से यह बताते हुए इसे यही विराम दे रहे हैं कि 21 जनवरी को जो कुंवारी लड़कियां व्रत रखती हैं और रात्रि में अपने पति की कल्पना करते हुए सीधी चन्द्रोन्मुख होकर लेटती हैं, उन्हें अर्धरात्रि में अपने पति के स्वप्न में दर्शन होते हैं।

अंग्रेजी साहित्य के प्रसिद्ध रोमांटिक कवि, कीट्स ने इसी विश्वास पर केन्द्रित 'दी ईव ऑफ सेंट एगनेस' नामक काव्य कृति का प्रणयन किया, जिसका सारांश इस प्रकार है- 'मैडलाइन नामक लड़की ने आज 21 जनवरी को सेंट एगनेस का व्रत रखा है। उसके पितृ गृह में शाम को शानदार पार्टी चल रही है। उसके पिता तथा अन्य जमींदार एवं सामंत खाने-पीने और जश्न मनाने में मशगूल है। 21 जनवरी की शाम, ओफ्फो! मानों भीषण शीत का साक्षात् अवतार ही लगती है। ठंड में सब कुछ जमा सा जा रहा है। बाड़ों में शांत भेड़ें ठंड के कारण मिनियाना भूल गई हैं तथा गिरजाघर के पादरी की उंगलियां मनका फेरते-फेरते सुन्न हो गई हैं। ऐसी बर्फीली-जश्नीली रात में मैडलाइन के यहां लोग जश्न मना रहे हैं, पर वह चुपके से वहां से अपने कक्ष में खिसक आती है, क्योंकि उसे तो सारी औपचारिकताओं के साथ सेंट एगनेस का व्रत पूर्ण करना है।

इधर मैडलाइन का अंत:पुर के अति अंदर रेशमी परदों से सुसज्जित अपने कक्ष में पहुंचना होता है, उधर कुछ ही क्षणों बाद उसका प्रेमी, पॉरफाइरो दूरस्थ दलदली जगह से आकर जान की बाजी लगाता हुआ मैडलाइन के महल में प्रवेश करता है और उसकी एक झलक पाने के लिए दैव से मूक प्रार्थना करता हुआ एक स्तंभ के पीछे छिप जाता है। पर, मैडलाइन की वृद्ध परिचारिका-एंजेला उसे देख लेती है, पहचान लेती है और उसे वहां से भागने की चेतावनी देती है। वह उसे फटकारते हुए यह भी कहती है कि दिन भर सेंट एगनेस का व्रत रखने के कारण मैडलाइन को इस समय ज्वर भी है तथा वह व्रत को पूर्ण विधि-विधान से संपन्न करते हुए अर्धरात्रि में अपने प्रेमी के स्वप्न में दर्शन करने की कामना के साथ शयन करना चाहती है। पॉरफाइरो एंजेला से आतुर विनय करता है कि वह मैडलाइन का दीदार करके ही वापस लौट जायेगा। एक बार, बस एक बार वह उसे मैडलाइन का दर्शन भर करा दे। एंजेला अंतत: द्रवीभूत होकर पॉरफाइरो को अनुमति प्रदान कर देती है। पॉरफाइरो मैडलाइन के बिस्तर तक जाता है तथा साथ लाये विविध प्रकार के फलों से तश्तरियां सजाकर उसके पास रखता है। वह पास ही रखी मैडलाइन की वीणा को उठाकर उसका प्रिय 'निर्मोही सुंदरी' उसके कानों में बजाता है। इसकी पिघली हुई मधुरता उसके कर्ण-कुहरों में प्रविष्ट होते ही उसे जगा देती है। पॉरफाइरो को अपने समक्ष प्रणय भाव में नत बैठे देखकर उसे लगता है मानों स्वप्न साकार भी हो गया है। वातावरण इतना मादक-मारक हो रहा था मानो गुलाब और बनफशा की सुगंधे एक में मिल गई हो। इसी समय उनके लिए वरदानी बनता हुआ बर्फानी तूफान आ जाता है। सभी प्रकार की प्रकाश व्यवस्था गुल हो जाती है और पॉरफाइरो मैडलाइन को विविध तर्कों से संतुष्ट कर उसे साथ ले वहां से निकल लेता है। इस प्रकार 'सेंट एगनेस' के व्रत से मैडलाइन को अपने पति के दर्शन ही नहीं होते, साक्षात पति ही मिल जाता है।

-'कामायनी', कायस्थान, पूरनपुर-पीलीभीत (उ.प्र.)

डॉ. रामसिंह यादव

नवरात्र में फलदायी है गायत्री साधना

नवरात्र का धार्मिक पुण्य पर्व महाशक्ति जगत जननी मां दुर्गा, भगवती की उपासना, आराधना, पूजा अर्चना का पर्व है। जो साधक घर-गृहस्थ सभी कोई नर-नारी किसी भी जाति, धर्म, वर्ग का तन्मय होकर आदिशक्ति नवदुर्गा सहित अन्य देवियां-भगवती शैलपुत्री, ब्रह्मचारिणी, चंद्रघंटा, कृष्मांडा, स्कंधमाता, कात्यायिनी, कालिका, चामुण्डा, कालरात्रि, बगलामुखी, महादेवी, महागौरी, सिद्धिदात्री, हरसिद्धि, भगवती कैलामाता, विंध्यवासिनी, बीजासन माता, वैष्णव देवी आदि के किसी भी स्वरूप का आह्वान कर नौ दिनों तक उपासना करते हैं, मां जगदम्बा दुर्गा उनकी सभी मनोकामनाएं (सांसारिक सुख, सौभाग्य, संपन्नता, पारिवारिक शांति और मोक्ष) पूरी करती है। यही कारण और सच्चाई है कि प्रतिवर्ष नवरात्रि के अवसर पर पूरे देश में मां दुर्गा तथा अन्याय सभी शक्तिरूपिणी देवियों की आराधना, उपासना करोड़ों देशवासी अपने तरीके से कर निष्ठा, आस्था, विश्वास, उम्मीद के साथ नवरात्र महोत्सव मनाते हैं।

नवरात्र में महाशक्ति वेदमाता गायत्री की पूजा-उपासना का विशेष महत्व इसलिए माना जाता है कि पृथ्वी पर महाशक्ति का प्रथम अवतरण वेदमाता के रूप में ही हुआ था। मनुष्य को जिस ज्ञान और विज्ञान की आवश्यकता थी उसका प्रकटीकरण वेदों के रूप में इसी गायत्री महाशक्ति के द्वारा हुआ। वेदमाता गायत्री भारतीय संस्कृति की जननी है। उत्कृष्ट चिंतन, स्वर्गीक सुख-शांति के साथ ही सद्बुद्धि, मानवीय प्रेम, अहिंसा, समता, एकता, सबका उत्थान और राष्ट्रवाद की भावना प्रत्येक इंसान में प्रदान करने वाली महाशक्ति विश्वमाता गायत्री ही है। आज के भयावह सर्वत्र फैले विषमता, आतंकवाद, खून-खराबा के युग में गायत्री माता सर्वसुखदायी देवी है।

लक्ष्मी, काली, महाकाली, वैष्णव देवी, चामुण्डा, हरसिद्धि, सरस्वती, पार्वती, श्रीदेवी, शैलपुत्री आदि कई नामों से जानी जाने वाली महाशक्ति महामाया का अस्तित्व समग्र सृष्टि में दृष्टिगोचर होता है, भक्तजन श्रद्धालु जिनकी उपासना कर महिमा का गुणगान करते नहीं थकते। मां दुर्गा जगदम्बा, जगत जननी सभी पर कृपा कर कृतार्थ करती है। गायत्री को वेदों का सार भी कहा गया है। तात्पर्य यह कि समग्र वेदाध्यान से जो फल प्राप्त होता है वह मां गायत्री की उपासना मात्र से ही प्राप्त हो जाता है। स्वयं वेद भी गायत्री की उपासना करते हैं। ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी सतत मां गायत्री का ध्यान करते है। गायत्री महामंत्र के प्रभाव से ही भगवान मनु, विश्वामित्र, पराशर ऋषि, शौक ऋषि, महर्षि याज्ञवल्क्य, भारद्वाज ऋषि, महर्षि वशिष्ठ, देवश्री नारद, गौतम ऋषि, शृंगी ऋषि और देवगुरु बृहस्पति और युधिष्ठिर आदि को सिद्धियां प्राप्त हो सकी। गायत्री महामंत्र के चौबीस अक्षरों में ही संपूर्ण ब्रह्माण्ड का रहस्य समाहित हो गया है। गायत्री मंत्र-

''ऊँ भू भुर्वः स्वः तत् सवितुर्वरेण्यं
भर्गोदेवस्य
धीमहि धियोयोनः प्रचोदयात्।।''

इससे यह स्पष्ट है कि जो गायत्री की उपासना करते हैं उनके सभी काम सफल माता गायत्री करती है। विविध दुखों क्लेशों की निवृत्ति, सुख संपन्नता, वैभव की प्राप्ति एवं मोक्ष गायत्री उपासक को प्रदान करती है। गायत्री महामंत्र के चौबीस अक्षरों वाले मंत्र में अलग-अलग देवी शक्तियों का निवास इस प्रकार माना गया है- वामदेवी, प्रिया, सत्या, विश्वा, भद्र-विलासिनी, प्रभावती, जया, शांता, कांता, दुर्गा, सरस्वती, विद्रुमा, विशालेशा, न्यापिनी, विमला, तमोड पहारिणी, सूक्ष्मा, विश्वयोनि, वशा, पझालया, पराशोभा, मद्रा और त्रिपदा देवी।

> **नवरात्र में महाशक्ति वेदमाता गायत्री की पूजा-उपासना का विशेष महत्व इसलिए माना जाता है कि पृथ्वी पर महाशक्ति का प्रथम अवतरण वेदमाता के रूप में ही हुआ था। मनुष्य को जिस ज्ञान और विज्ञान की आवश्यकता थी उसका प्रकटीकरण वेदों के रूप में इसी गायत्री महाशक्ति के द्वारा हुआ।**

गायत्री महामंत्र 'ऊँ' से आरंभ होता है। ओंकार को ब्रह्म का रूप मानकर इसे प्रणव कहा गया है। ओंकार एक प्रकार से सेतु है, फल है जिस पर से होकर ही मंत्रों को पार किया जा सकता है। फलस्वरूप गुण, कर्म, स्वभाव में सात्विकता के द्वारा स्वर्ग, मोक्ष, अमरता, सिद्धि, आत्मदर्शन और शिवत्व की ओर साधक बढ़ता है। ऊँ का उच्चारण करने से ऐसी स्वर तरंगे गूंजती है जिससे साधक के सभी स्नायुतंत्र झंकृत हो जाता है और मन एकाग्र हो उठता है। 'भूः भुर्वः स्वः' प्रणव ऊँ के बाद तीन आहुतियां आती है भूः भुंवः स्वः इन तीनों को त्रिपदा गायत्री के बीज मंत्र के रूप में माना जाता है। ब्रह्मा, विष्णु और महेश इन तीनों उत्पादक, पौषक और संहारक शक्तियों को भूः भुंवः स्वः कहते हैं। इनका आह्वान किया जाता है। 'तत् सवितुर्वरेण्यं' इस पद में तत्, सवितः और वरेण्य् तीन शब्द है। तत् अर्थात उस ईश्वर, सवितः अर्थात तेजस्विता प्रदान करने वाले एवं वरेण्यं अर्थात धारण करने योग्य। इन रहस्यों को जानने वाला साधक ही मां गायत्री की कृपा को प्राप्त करता है। 'भर्गो देवस्य धीमहि' इसमें तीन शब्द आते है। भर्ग से तात्पर्य भगवान की उस शक्ति से है जो बुराइयों का, अंधकार-अज्ञानता का नाश करके हमको सत्कर्मों में प्रवृत्ति को लाने की ओर प्रेरित करता है। देव अर्थात दिव्य, अलौकिक व असाधारण लोकमंगल के कार्यों में संलग्न रहने की प्रेरणा इससे प्राप्त होती

है। धीमहि अर्थात ध्यान। ध्यान से ही सफलता मिलती है। ध्यान से ही मस्तिष्क में ईश्वर की तेजस्विता, श्रेष्ठता, शक्तिशाली दिव्य विचारों को प्रदान कर आत्मकल्याण और परमार्थ के कार्यों में साधक का मन लगा रहे, यह प्रेरणा हमें इससे मिली है। 'धीयो योनः प्रचोदयात्' गायत्री मंच का यह अंतिम पद धी अर्थात बुद्धि, ज्ञान, सोच और विचार को प्रेरणा प्रदान करने की ईश्वर से प्रार्थना है। गायत्री सद्बुद्धि की प्रदाता देवी है। सद्बुद्धि के साथ ही पुरुषार्थ को प्राप्त कर उससे प्रयत्न, संघर्ष और श्रम करके अभिष्ठ वस्तुओं को प्राप्त करने का आदेश देता है।

दूसरे अर्थों में- ''ऊँ भू भुर्वः स्वः तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियोयोनः प्रचोदयात्।।'' का भावार्थ हम इस प्रकार भी समझ सकते है- उस प्राण स्वरूप, दुःखनाशक, सुख स्वरूप, श्रेष्ठ, तेजस्वी, पापनाशक, देवस्वरूप परमात्मा की शक्ति को हम अपने अंतःकरण में धारण करे और परमात्मा की उस शक्ति से हमारे कर्म व मेघा-बुद्धि को सन्मार्ग प्राप्त होकर हम लोक कल्याण की ओर अपने श्रम को लगाये। इस गायत्री महामंत्र में इन चौबीस अक्षरों में इतनी शक्ति विद्यमान है कि जो भी साधक सच्चे मन से ध्यान लगाकर माता गायत्री की स्तुति ध्यान पूजा करता है उसे मनचाही सिद्धि प्राप्त हो सकती है।

यूं तो गायत्री महामंत्र की साधना, जप कभी भी किया जा सकता है। गागर में सागर के समान, अपने आप में शक्तियों का भंडार समेटे यह महामंत्र अपने साधक को फलदायी होता है परन्तु नवरात्र के विशेष अवसर पर उन नौ दिनों में साधक गायत्री माता के सम्मुख (प्रतिमा अथवा तस्वीर आदि) बैठकर नियमानुसार पूजन विधि को संपन्न कर ध्यान पूर्वक माता गायत्री कवचन, हृदयन्यास, अंगीन्यास, प्राणायाम न्यास और गायत्री स्रोत को करते हुए तुलसी की माला से 26 माला प्रतिदिन के हिसाब से जाप करते हुए 24000 मंत्रों का जाप करे तथा अंतिम दिन 240 मंत्रों से हवन कर पूर्णाहुति करे तब उस व्यक्ति पर महाशक्ति गायत्री की विशेष कृपा होगी। साधक अपने अभीष्ट को प्राप्त कर लेता है। गायत्री महामंत्र के जाप एवं हवन से त्वरित फल को पाने के लिए साधक को सदाचार का आचरण करना आवश्यक है।

स्वयं भगवान नारायण ने महर्षि नारद को महाशक्ति गायत्री महामंत्र के संबंध में कहा है कि-

जप कृत्वां होम पूजा, ध्यानं कृत्वा विशेषतः।
यस्मै-कस्मै न दातव्यं गायत्रयास्तु विशेषतः।।
यद्गृहे लिखितं शास्त्रं भयं तस्य न कस्यचित्।
चंचलापि स्थिरा भूत्वा कमला तत्र तष्ठिति।।

अर्थात जो भी साधक गायत्री का महामंत्र जाप, हवन, उपासना, पूजा और ध्यान करता है जिसके घर से गायत्री संबंधी शास्त्रों का पठन व लेखन होता है वहां साक्षात यम भी आने से घबराते है तथा उस गृह के सदस्यों पर माता गायत्री की विशेष कृपा सदैव बनी रहती है।

-14, उर्दूपुरा, उज्जैन (म.प्र.)

लक्ष्मीजी एवं गणेशजी साथ क्यों ?

मुरली कांठेड़

भगवान गणेश पंचदेवों में अग्रगण्य हैं। सभी आध्यात्मिक अनुष्ठानों में सर्वप्रथम उन्हीं का स्मरण और पूजन किए जाने की शास्त्रीय विधि है, जिसका पालन व्यापक रूप से प्रत्येक सनातनी के घर में भी किया जाता है। गणेशजी का वैदिक नाम 'गणपति' है। जिसका उल्लेख ऋग्वेद (2, 23, 1) में मिलता है।

गणेशजी देव मंडल के गणपति के रूप में प्रतिष्ठित हैं। वैदिक शिव अर्थात रुद्र के गणों के वे अधीश्वर हैं। पुराणों में रुद्र के मरुत, आदि असंख्य गणों का उल्लेख है, जिनके नायक या स्वामी होने से गणेशजी को 'विनायक' या गणपति कहते हैं। इस प्रकार सृष्टि के आदिकाल से ही गणेश का संबंध आर्य-गणों, रुद्र-गणों एवं शिव परिवार से रहा है। रुद्र से गणेश को विघ्नकारी जैसी भयंकर गुण और शिव से सिद्धिकारी, मंगलदायक गुण मिले हैं, जिससे वे 'निग्रह' व 'अनुग्रह' दोनों शक्तियों से संपन्न हैं।

श्री गणेश की पूजा प्रथम देवता के रूप में समस्त आध्यात्मिक कर्मों में अनिवार्य रूप से की जाने का विधान है।

गणेश या गणपति के आविर्भाव के संबंध में अनेक कथायें हैं। मुख्य रूप से उन्हें शिव-पार्वती का पुत्र माना गया है। मूलतः वे 'शक्ति-पुत्र' के रूप में ही प्रतिष्ठित हैं और 'आत्मा वै पुत्र जायते' इस सिद्धांत के अनुसार गणेशजी साक्षात् शक्ति स्वरूप ही हैं।

मंगलमूर्ति भगवान श्री गणेश वेदविहित समस्त धर्मों में प्रथम पूज्य नित्य देवता हैं। मंगलमूर्ति श्री गणेश के नाम, स्मरण, ध्यान, आराधना, मंत्र, प्रार्थना से मेधाशक्ति का परिष्कार होता है, समस्त कामनाओं (किसी भी इष्टदेवता की साधना करने से) की पूर्ति होती है और समस्त विघ्नों एवं बाधाओं का विनाश होता है और मनोरथ की प्राप्ति होती है।

अतः श्री गणेश की पूजा प्रथम देवता के रूप में समस्त आध्यात्मिक कर्मों में अनिवार्य रूप से की जाने का विधान है। श्री गणेश विद्या, बुद्धि और समस्त सिद्धियों के दाता कहे जाते हैं। भगवान शिवजी ने श्री गणेशजी को वरदान (लिंग पुराण) दिया था कि 'जो तुम्हारी सर्वप्रथम पूजा करे बिना कल्याणकारी कर्मों का अनुष्ठान, पूजा, साधना करेगा, उसका मंगल भी अमंगल में परिणित हो जायेगा। तीनों लोकों में जो चंदन, पुष्प, धूप, दीप आदि के द्वारा तुम्हारी पूजा किये बिना ही कुछ पाने की चेष्टा करेंगे, वे देवता हों अथवा और कोई उन्हें कुछ भी प्राप्त नहीं होगा। जो देवता या मनुष्य श्री गणेश की पूजा करेंगे वे निश्चय ही इन्द्रादि देवताओं द्वारा भी पूजित होंगे। जो लोग फल की कामना से ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र अथवा अन्य देवताओं की पूजा करेंगे किन्तु तुम्हारी पूजा नहीं करेंगे, उन्हें तुम विघ्नों द्वारा बाधा पहुंचाओगे।

श्री गणेश विघ्नहर्ता एवं शक्ति पुत्र होने से प्रत्येक सनातनी प्रतिदिन गणेशजी की महालक्ष्मी के साथ पूजा कर उन्हें पति से विमुख तो नहीं कर रहा है? मेरे मत में श्री गणेशजी को हम श्री लक्ष्मीजी के साथ पूजकर उन्हें श्री विष्णुजी से अस्थायी रूप से अलग कर रहे हैं। क्योंकि लक्ष्मीजी तो भगवान विष्णु के हृदय में निवास करती हैं। इस मुख्य कारण से लक्ष्मीजी अस्थिर रूप से प्रसन्न तो हो जाती हैं, किन्तु स्थिर रूप से प्रसन्न नहीं होती हैं। श्री लक्ष्मीजी का अस्थिरता (चंचला) का यह मुख्य आधार है। इस आधार के कारण श्री लक्ष्मीजी को उनके पति श्री विष्णुजी के साथ ही पूजना श्रेयस्कर है। बिड़ला परिवार श्री लक्ष्मी-विष्णु (श्री लक्ष्मी-नारायण) के मंदिर का निर्माण कर और दोनों को साथ पूजकर अपनी चौथी पीढ़ी में धन की बराबर बढ़ोतरी कर रहा है। ऐसी मान्यता है कि तीन पीढ़ियों के बाद धन का क्षय होने लगता है। लक्ष्मीजी को जब हम उनके पति विष्णु के साथ पूजेंगे तो वे 'चंचला' न होकर 'स्थिर' रहेंगी।

शास्त्रज्ञान

पी.डी. सिंह

संस्कार शिक्षा के प्रणेता देवर्षि नारद

नारद ब्रह्मा के मानस पुत्र थे। वे महान तत्त्वज्ञ एवं ईश्वर के महान भक्त थे और अपने प्रभु नारायण को आठों प्रहर स्मरण करते रहते थे, कीर्तन में संलग्न रहते थे। नारायण का जप-कीर्तन और लोगों को शिक्षा देना–यही दो प्रधान कार्य थे। उनके प्रशिक्षण का क्षेत्र व्यापक था। तीनों लोकों में उनकी निर्बाध गति थी। उन्होंने व्यासजी द्वारा रचित तीन लाख श्लोकों वाला महाभारत देवताओं को सुनाया था। उन्होंने ही मार्कण्डेय मुनि को धर्मशास्त्र एवं आत्मज्ञान सिखाया था, श्री वाल्मीकि रामायण का ज्ञान कराया और व्यासजी को भागवत लिखने की प्रेरणा दी। जब पाण्डवों को वन में ब्राह्मणों को भोजन कराने में कठिनाई हुई तो उनके पुरोहित धौम्य मुनि को सूर्य की उपासना करके अक्षयपात्र प्राप्त करने की आराधना बताई।

प्राय: लोग नारद को झगड़ा कराने वाला बताते हैं और आज भी परस्पर झगड़ा कराने वाले व्यक्ति को नारद बताते हैं। श्रीकृष्ण ने कह रखा था कि यह तो विश्वहित में नारद की निर्दोष लीला है। वे कहते थे कि जब किसी दैत्य व दानव का विनाशकाल आ जाता था तो वे उसके कलह भाव को उभारते थे किन्तु असत्य का सहारा कभी नहीं लेते थे। वे दुष्ट का हित (नाश) और विश्व का कल्याण करते थे।

नारद नैतिकता को जीवन में उतारने की शिक्षा देते थे। जब हिरण्यकश्यप का बोलबाला था सब उससे भयभीत थे। वह अहिंसा की बजाय हिंसा, प्रेम के स्थान पर विद्वेष का और ईश्वर के स्थान पर वह स्वयं अपने को प्रतिष्ठित करना चाहता था। जब हिरणकश्यप का अत्याचार और अन्याय बढ़ता चला गया और भूमंडल को वह वीरान करता चला गया तो यह देखकर नारद को चिन्ता हुई।

वरदान के प्रभाव से हिरण्यकश्यप का कोई बाल भी बांका नहीं कर सकता था। देवर्षि नारद सत्य एवं धर्म के नाश से चिंतित थे। वे जानते थे कि इस मूढ़ पर तो शिक्षा का प्रभाव पड़ेगा नहीं और नई पीढ़ी को ही शिक्षित करना होगा। पर किसी को सिखाना मुश्किल था क्योंकि सब ओर हिरण्यकश्यप का ही आतंक था। नारदजी को कुछ प्रतीक्षा करनी पड़ी।

जब हिरण्यकश्यप तप करने चला गया तो इन्द्र ने अपनी छीनी हुई धन-दौलत को पुन: प्राप्त करने हेतु नगर पर चढ़ाई कर दी। इन्द्र का सामना कौन कर सकता था। वह अपनी वस्तुएं वापस ले गया साथ ही रानी कयाधू को भी बन्दी कर लिया। कयाधू गर्भवती थी। उसे अपने से ज्यादा गर्भस्थ शिशु की अधिक चिन्ता थी इसलिये जोर-जोर से विलाप करती जा रही थी। नारद तो अवसर की प्रतीक्षा में थे ही सो तुरन्त आ पहुंचे। उन्होंने इन्द्र को भला बुरा कहा और उसे समझाया कि महिलाएं अवध्य होती हैं, अत: कयाधू को छोड़ दो। इन्द्र बोले- ''मैं इसे नहीं इसके गर्भस्थ शिशु को मारूंगा क्योंकि सांप का बच्चा सांप ही होता है। बड़ा होकर यह भी निरीह प्राणियों की हत्या करेगा। अत: करोड़ों की हत्या बचाने हेतु एक की हत्या ही ठीक है।''

नारदजी ने कहा- ''देवराज, रहस्य की बात यह है कि यह बालक तो भगवान का भक्त बनेगा।'' इन्द्र ने कयाधू को मुक्त कर दिया। कयाधू ने अब नारद मुनि के पास रहने में ही अपने को सुरक्षित समझा और उनके आश्रम में ही रहने लगी। नारदजी यही तो चाहते थे ताकि वे गर्भस्थ शिशु को गर्भकाल से ही ईश्वरभक्त और धर्मरक्षक बना दें और यह योजना सुनकर कयाधू प्रसन्न हुई पर दानव के बालक को ईश्वरभक्त बनाने की शिक्षा कैसे संभव होगी, यह संशय था।

उन्होने दो बच्चों की घटना से समझाया। एक बालक हाथ में मेहंदी लगाकर आया और दूसरे से कहा- ''तू भी मेहंदी लगाकर हाथ लाल कर ले।'' बालक बोला अरे मेहंदी के हरे पत्तों से ललाई कैसे आयेगी, पहले ने कहा, ''अपनी मां से कहो मेहंदी के पत्तों को पीसकर तुम्हारी हथेली में लगाये, थोड़ा सुखाओ फिर हाथ धो लो। उसने ऐसा ही किया और हाथों में लाली आ गई।''

नारदजी ने कयाधू से कहा– ''बेटी, मेहंदी की लाली दिखती नहीं पर उसमें व्याप्त है। उसे विशेष प्रक्रिया से देखा जा सकता है। इसी प्रकार कण-कण में ईश्वर व्याप्त है उसे भी विशेष प्रकृति से देखा जा सकता है।'' नारद प्रतिदिन एक सत्य घटना सुनाते गये। उन्होंने यह भी बताया कि किस प्रकार ब्रह्मा के वरदान से हिरण्यकश्यप शक्तिशाली हो गया है। वे धर्म कथाएं सुनाते रहे। कयाधू तो पति प्रभाव से, दबाव से व भय से पत्थर बन गई थी पर गर्भस्थ शिशु अभी कच्ची मिट्टी की लौंदा मात्र था। इस पर संस्कार डालना सरल होता है और संस्कारित हो जाने पर उसे कोई भी नहीं डिगा सकता। मैं इस गर्भस्थ शिशु को गर्भ से ही ईश्वर का अनन्य भक्त बनाने का प्रयास कर रहा हूं।

बालक तो संस्कारित हो ही गया लेकिन गुरु के आश्रम में जाकर उसने अन्य बालकों को भी ईश्वर का भक्त बना दिया। इस प्रकार उसने गुरु नारद की ''नयी पीढ़ी का निर्माण पद्धति'' को चालू रखा।

हिरण्यकश्यप को प्रहलाद की ईश्वरभक्ति से घोर अप्रसन्नता हुई। नन्हें बालक को आग में जलाने का प्रयत्न किया पर वह जला नहीं। भक्ति व विश्वास और भी दृढ़ हो गया और नदी मे डुबोया तथा पहाड़ से गिराने पर भी बच गया। यह देखकर उसे अपने पर अविश्वास हो उठा कि मैं तो ईश्वर नहीं हूं, ईश्वर तो कोई और ही शक्ति है। फिर भी उसने अंतिम प्रयास किया। स्वयं प्रहलाद की हत्या करने का और हत्या करने से पहले पूछा ''अब कहां है तेरा भगवान, देखता हूं कैसे बचायेगा?'' प्रहलाद ने कहा- ''भगवान सब जगह है, इस खंभे तक में भी वह मौजूद है।'' यह सुनकर कुपित हिरण्यकश्यप ने जब तलवार का वार करना चाहा तो खंभ फाड़कर नृसिंह रूप में भगवान ने उस वरदान प्राप्त शक्तिशाली हिरण्यकश्यप का अपने हाथों के नाखूनों से वध कर दिया। इस प्रकार नई पीढ़ी में हिरण्यकश्यपवाद समाप्त हो गया और आस्तिकवाद की स्थापना हो गयी।

यह सत्य है कि प्रभावी शिक्षा का एवं संस्कारित करने की शिक्षा को गर्भकाल से बालक के 7 वर्ष की आयु तक तो सघन रूप से दी जानी चाहिये तभी वह दृढ़ संस्कारित होकर आसुरी प्रवृत्तियों का मुकाबला कर सकेगा। आस्तिकता के समक्ष नास्तिकता टिक नहीं सकती-

'नासते विद्यते भावो नाभावो विद्यते सत:।'

–निदेशक, टैगोर शिक्षण संस्थान
शास्त्री नगर, जयपुर-302016 (राज.)

राजेन्द्र बहादुर सिंह 'राजन'

आत्मा ही शिव है

आत्मा ही सच्चिदानन्द है। सद्–चित्–आनन्द शिव के ही विग्रह हैं। शिव का अर्थ ही है हर प्रकार से कल्याण करने वाला। भीतर–बाहर हर ओर से हम शिव स्वरूप ही हैं। किन्तु माया–प्रपंच के कारण जीव अपने यथार्थ स्वरूप को भूले रहता है। वास्तव में हम न तो संसार के ही यथार्थ रूप को समझ पाये हैं, न स्वयं के अस्तित्व को।

आत्मा का ही दूसरा नाम शिव है। आत्मशक्ति ही शिवशक्ति है। जिस प्रकार समुद्र की तरंगों को समुद्र से और सूर्य की किरणों को सूर्य से पृथक नहीं किया जा सकता, उसी प्रकार शिव को शक्ति से पृथक नहीं किया जा सकता। शिव है तो शक्ति होगी ही और शक्ति है तो शिव होंगे ही। शक्ति समन्वित होकर आत्मा चैतन्य स्वरूप धारण करता है। वस्तुतः आत्मा तो शक्ति संपन्न है ही किन्तु सुसुप्त शक्ति को साधना द्वारा जागृत करना पड़ता है। ठीक उसी प्रकार जैसे शुष्क काष्ठ में अथवा पत्थर में आग तो पहले से ही अन्तर्निहित है किन्तु वह अप्रकट है। घर्षण क्रिया द्वारा उससे आग प्रज्वलित की जाती है। कुण्डलिनी जागरण की प्रक्रिया को इसी संदर्भ में लेना चाहिए।

आत्मा ही सच्चिदानन्द है। सद्–चित्–आनन्द शिव के ही विग्रह हैं। शिव का अर्थ ही है हर प्रकार से कल्याण करने वाला। भीतर–बाहर हर ओर से हम शिव स्वरूप ही हैं। किन्तु माया–प्रपंच के कारण जीव अपने यथार्थ स्वरूप को भूले रहता है। वास्तव में हम न तो संसार के ही यथार्थ रूप को समझ पाये हैं न स्वयं के अस्तित्व को। बिना स्वयं को जाने संसार को समझ पाना दुष्कर कार्य है। इस संसार की विविधता में भी आखिरकार एकता है और यह एकता ही एकत्व का सूचक है। इसी पर विचार करना है। इस संसार रूपी विराट वृक्ष की अनंत शाखाएं हैं। प्रत्येक शाखा में अनंत पत्ते, फूल, फल हैं। किन्तु उस वृक्ष का मूल तो एक ही है जो अदृश्य है। संसार रूपी वृक्ष तो दीखता है किन्तु उसका मूल नहीं दीखता।

व्यष्टि रूप में जो आत्मा है वही समष्टि रूप में परमात्मा है। सभी आत्माओं में पूर्ण समानता है। इसलिए उनमें परस्पर आत्मीयता है। आत्मा परमात्मा में अभिन्नता है। महासागर और उसके जल की बूंद–बूंद में जो साम्य है, वहीं आत्मा और परमात्मा में है। एक अंश है तो दूसरा अंशी।

माया का आश्रय लेकर आत्मा जीवात्मा नाम धारण करता है। आत्मा में माया अर्थात शक्ति अर्थात प्रकृति वैसे ही अन्तर्निहित है जैसे शुष्क काष्ठ में अग्नि। शुद्ध आत्मा निष्कल, निराकार, निर्विकार है। रजोगुणी प्रकृति का आश्रय लेकर यही जीवात्मा ब्रह्मा का नाम, स्वरूप धारण कर सृष्टि का सृजन करता है। स्वजनित बच्चों का पिता, उनके बच्चों का पितामह आदि नाम धारण करता है। संतानोत्पत्ति के पश्चात वही जीवात्मा सतोगुणी प्रकृति का आश्रय लेकर विष्णु का नाम, स्वरूप धारण कर स्वरचित सृष्टि का परिपालन करता है। विष्णु अपनी संतानों के भरण पोषण एवं रक्षण का भार अपने ऊपर उठाता है। संतानों के जीवन में स्थायित्व आने के बाद उनका विवाह संस्कार करता है। तदनन्तर यही जीवात्मा तमोगुण का आश्रय लेकर महेश नाम, रूप धारण कर स्वसृजित सृष्टि (घर, परिवार, संसार) का मानसिक रूप से संहार कर देता है। संहार का अर्थ हत्या नहीं है संहार से तात्पर्य सर्व का प्रलय से है। प्रलयंकारी शिव वैरागी है। इसीलिए महेश वैरागी कहे जाते हैं। यह वैराग्य ही महेश को ब्रह्मा, विष्णु से भी उच्च पद प्रदान करता है, तभी तो उन्हें महेश कहा जाता है। वस्तुतः एक ही जीवात्मा लोक प्रयोजनार्थ माया अर्थात स्वशक्ति का आश्रय लेकर ब्रह्मा, विष्णु, महेश नाम धारण कर लोक में पूजित होता है।

परमात्मा सबका स्वामी है और हम सेवक। हमें जो कुछ भी प्राप्त है चाहे वह अपना शरीर हो, पत्नी हो, बच्चें हों, धन दौलत हो, ज्ञान, विज्ञान हो या कुछ और सभी उसी से प्राप्त है। वास्तव में हमारा अपना कुछ नहीं है। न हम अपने साथ कुछ लेकर आये थे, न साथ लेकर जायेंगे। सब यही बीच में मिला था, बीच में छूट जायेगा। यहां तक अपना शरीर भी अपना नहीं है। सारा कुछ परमात्मा का दिया हुआ है। किन्तु उसने सारा कुछ विशेष प्रयोजन से दिया है। प्रभु से दी गयी सामग्री की सेवा करना प्रभु की सेवा करना है। सेवा का अर्थ है हमारे किसी कार्य, व्यवहार अथवा वाणी से प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से किसी प्राणी को कष्ट न पहुंचे। यह शिवत्व भाव ही शिव की सेवा है क्योंकि सारी आत्माओं में एकता है और सारी आत्मायें उसी एक परमात्मा का अंश है।

स्थूल से सूक्ष्म, सूक्ष्म से सूक्ष्मतर तथा सूक्ष्मतर से सूक्ष्मतम की ओर यात्रा करने पर जब अद्वैत भाव आता है तो साधक सहज ही कह उठता है–'अयम् आत्मा ब्रह्म।' गुरु व्यक्ति भी हो सकता है, आध्यात्मिक पुस्तकें भी हो सकती हैं। प्रकृति में कोई भी हमारा गुरु हो सकता हैं कुछ जानने की, कुछ समझने की, कुछ प्राप्त करने की जिज्ञासा होनी चाहिए। जिज्ञासा जितनी उत्कट होगी, गुरु प्राप्ति की संभावना उतनी अधिक होगी। गुरु को कहीं खोजने नहीं जाना। वह तो अपने ही भीतर है। करुण पुकार सुनकर वह नाना रूपों में प्रकट होकर मार्ग प्रशस्त करता है। कभी व्यक्ति के रूप में, कभी पुस्तक के रूप में, कभी किसी और रूप में।

मन जिन वासनाजन्य इन्द्रियों और इन्द्रियों के सेनापतियों को अपना सगा, मित्र, संबंधी समझे बैठा है, वही सब उसके शत्रु हैं। सद्विचारों की सेना से मन को दुर्विकारों की सेना को परास्त करना पड़ता है। फिर सद्विचारों की आसक्ति भी त्यागनी पड़ती है। निर्विचार मन को योगाग्नि में स्वयं को भस्म करना पड़ता है। तब कहीं अस्तित्वबोध होता है। पूर्ण समर्पण भाव ही वह अमोघ अस्त्र है जिससे इस युद्ध को जीता जा सकता है। आत्मदर्शन के पश्चात साधक करुणावतार शिव हो जाता है। आत्मा अनुभूति का विषय है। आत्मा मन से सर्वथा भिन्न है। जागृति में सारी इन्द्रियां सहित मन जागृत रहता है। किन्तु मन बाह्य दृश्य (संसार) ही देखता है। स्वप्नावस्था में सारी इन्द्रियां सो जाती हैं अर्थात पूर्णतया निष्क्रिय हो जाती है। मन जागृत रहता है किन्तु वह बाह्य सांसारिक दृश्य का प्रतिबिम्ब विशेष ही देखता है जिसे स्वप्न कहते हैं जो जागृत होने पर झूठा सिद्ध हो जाता है। सुसुप्तावस्था में गाढ़ निद्रा की स्थिति में भी सारी इन्द्रियों के साथ मन सो अथवा खो जाता है। किन्तु आत्मा प्रकाश स्वरूप, आनन्द स्वरूप है। इसलिए जागने पर आनन्द का बोध बना रहता है। आत्मा मन का द्रष्टा है। मन की सारी गतिविधियों को वह देखता है। मृत्यु के पूर्व और मृत्यु के बाद मात्र जीवात्मा ही रहता है। अजन्मा और अमर है। यही शिव है, मृत्युंजय है। यह स्वप्रकाश से प्रकाशित है। मन आत्मा के प्रकाश से प्रकाशित और आत्मा के तेज से तेजोमय है। शिव हुए बिना शिव को प्राप्त नहीं किया जा सकता।

–ग्राम–फत्तेपुर, पो.– बेनीकामा
जिला–रायबरेली–229402 (उ.प्र.)

लोक-विज्ञान

सुरेन्द्र अंचल

तुलसी और बाल रोग

तुलसी विपिनस्यापि समन्तास्यावन स्थलम्।
क्रोश मात्रं भवन्येव गंगेयस्वेच पावकः।।

जहां तुलसीवन होता है वहां एक कोस तक पृथ्वी गंगाजल सम-पावन हो जाती है।

तुलसी की पत्तियों की गंध ही आस-पास के वायुमंडल को शुद्ध करने वाली है। कहते हैं कि भगवान विष्णु को तीन तत्व- शंकर, आंवला और तुलसी प्राणों से भी प्रिय थे, सभी पेड़ों व पौधों में तुलसी सर्वाधिक रोगनाशक है। इसका हजारों-हजारों रोगों में उपयोग होता है। बाल मृत्युदर कम करने हेतु विश्व में यूनिसेफ के खरबों रुपये प्रतिदिन खर्च किये जा रहे हैं, मगर किसी का ध्यान तुलसी दल पर क्यों नहीं गया? बाल रोगों के निरोध हेतु तुलसी का कोई मुकाबला नहीं है। तुलसी सहज प्राप्य है। अधिकतर हिन्दु परिवारों में तुलसी का पौधा आदर के साथ रोपा जाता है। अतः सहज प्राप्य होने में यथासमय पीड़ित बालक की चिकित्सा की जा सकती है। प्रायः यह देखने में आता है कि अधिकांश बीमारियां वयस्कों में होती है वे ही बच्चों में भी पायी जाती है। बच्चे बड़ों की अपेक्षा अधिक कोमल व संवेदनशील होते हैं और वे विकसित हो रहे होते हैं। आयु के अनुसार बच्चें तीन प्रकार के होते हैं- दूध पीते, अनाज और खाना शुरू करने वाले एवं भोजन कर लेने वाले।

मात्र दूध पर जीने वाले बच्चों की बीमारियों के लिए मां यों तो जागरूक रहती ही है। अन्न खाना शुरू करने वाले बालकों के लिए मां को भी दवा लेनी होती है, तो बालक को भी। भोजन कर लेने वाले बड़े बच्चों को स्वयं के ही उपचार की आवश्यकता होती है।

निर्बलता- तुलसी की पत्तियों का रस, पांच बूंद, दस माह तक के बालक-बालिकाओं के लिए तथा 10 से 15 माह के बालक-बालिका के लिए शहद के साथ हल्का गर्म करके देवें। यदि बालक ले सके तो अदरक का रस भी 2-3 बूंद मिला देवें, दस दिनों में ही स्वास्थ्य में सुधार होता दिखेगा, निरन्तर एक माह तक कम से कम देवें।

पेट का बढ़ना (फूलना)- कुछ बालकों के कुपोषण अथवा रेत खाने अथवा अन्य कारणों से पेट फूल जाता है, चर्बी बढ़ जाती है तुलसी की जड़ की छाल को छाया में सुखाकर कूटे, कपड़े से छान करके शहद के साथ दिन में 3-4 बार चटावें, एक महीना, दो महीना जितना उचित समझे देते रहें।

कान-पीड़ा- बालक बार-बार अंगुली कान की ओर ले जाये तो समझ लो कान में पीड़ा हैं। तुलसी के पत्तों का रस कान में टपकावें। पीड़ा का शमन होगा।

कान बहना- तुलसी दल का रस, नीम पत्तियों का रस और शहद बराबर मात्रा में लेवें, दो-तीन बूंद दिन में 3 बार टपका देवें। तीन दिन में ही कान का बहना कम पड़ जायेगा। पांच या सात दिन करें। तुलसी की पत्तियों में कपूर मिलाकर कान में डालें। पीव आना बंद हो जायेगा।

पेट दुखना- बालक रह-रह कर जोर-जोर से रोता है। पैरों को मोड़ता हैं। मुंह से लार गिरती है तो समझ लेवे कि पेट में दर्द है, ऐसे में बच्चे के पैर ठण्डे रहते है। तुलसी का रस व अदरक का रस समभाग मिलाकर गर्म कर, दो बूंद नींबू रस के साथ डाल दो चम्मच पिलावें। आधे घंटे बाद फिर दोहरावें। पीड़ा शांत हो जायेगी।

उल्टी- बच्चे बार-बार 'उल्टी' करने लगे तो एक साल तक के लिए एक रत्ती तुलसी के बीज पीस कर दिन में तीन-चार बार देवें। बच्चों में यह रोग बहुत देखने को मिलता है। पेट में कृमि की अवस्था में बच्चों को पेट में दर्द बढ़ जाता है और वह गुदा स्थान को अंगुली से खुजलाता है। बहुत से बच्चे रात को दांत कटकटाते हैं। कृमि की वजह से बच्चे रात को दांत किटाते है। ज्वर आदि आने से उसमें शिथिलता, दस्त आदि रोग भी हो जाते हैं।

श्वास रोग- बच्चा जब ओठों को दांतों के निचले स्थान को जीभ से दबायें, नींद में चहके तो समझ ले श्वास की तकलीफ है। ऐसे में तुलसी दल का रस आधा चम्मच, शहद आधा चम्मच मिलाकर चटावें। तुलसी की मंजरी गुड़ के साथ उबाल कर एक-दो चम्मच दिन में तीन बार देवें।

उल्टी-दस्त- उल्टी दस्त रोग हो या केवल दस्त ही हो तो भी तुलसी के बीज पीसकर शहद में चटावें या दूध में पिलावे। यह क्रिया दिन में तीन बार करें। बच्चों की आंते प्रारंभ के 1-2 वर्षों तक बेहद संवेदनशील होती है। आहार-विहार में परिवर्तन होने से उसकी आंतें प्रभावित होती है। अतः दूध पीने वाले बालकों पर उसके माता-पिता को विशेष ध्यान देना चाहिए। दस्तों की संख्या और मात्रा सामान्य से अधिक हो या दुर्गंध हो तो हरे पीले या लाल रंग की दस्ते हो तो शीघ्र उपचार करना चाहिए।

छोटी माता (खसरा)- यह रोग बच्चों के लिए घातक हुआ करता था। अब तो इस रोग पर यथेष्ट नियंत्रण करने के दावें किये जाते है किन्तु फिर भी यह रोग हो रहा है। आजकल तीन से छह माह के शिशु को खसरा के टीके व दवा की बूंदे पिलाने से यह रोग बहुत कम हो गया है। इसके लिए नीम और तुलसी दोनों की ही बड़ी मान्यता है।

- ऐसे रोगी को तुलसी के पत्तें उबाल कर उस पानी को ठण्डा करके रोगी को पिलाते रहे।
- तुलसी की 11 पत्तियां, कालीमिर्च के तीन नग को साथ में पीसकर गुनगुने पानी के साथ दिन में तीन बार दो-दो, तीन-तीन चम्मच पिलाते रहे।
- तुलसी के उबले पानी से प्रतिदिन कुल्ले करवाने चाहिए, चाहे तो इस पानी में थोड़ी फिटकरी घोल लेते तो अधिक उपयोगी रहेगा।
- नीम की पत्तियों को या फिर तुलसी की पत्तियों को तकिये के नीचे रखे। दो-तीन तुलसी पत्र को मुनक्का दाख के साथ, सेंधा नामक लगाकर जब भी खाने की इच्छा करें खिलाते रहे, मुनक्का न हो तो शहद के साथ चटावे। तिमारदार को भी यह उपचार लेते रहना चाहिए।

-2/152, साकेत नगर, ब्यावर, अजमेर (राजस्थान)

उपचार

मुनि किशनलाल

नींद की समस्या का समाधान

लम्बे समय तक सोते रहने, उठने के बाद भी आलस्य का बना रहना और अपने आप में कमजोरी का अनुभव होना, बार–बार नींद का टूटना आदि लक्षणों वाली नींद अच्छी नींद नहीं होती है। नींद में बार–बार और डरावने सपने आना भी स्वस्थ नींद नहीं है।

हमारे लिए नींद जीवनदायिनी है। नींद के बिना जीवन शून्य है। नींद से जीवन का आधा समय व्यर्थ ही चला जाता है, ऐसा कुछ लोग सोचते हैं, किन्तु सच्चाई यह है कि यदि कुछ दिन नींद नहीं आये तो आदमी पगला जाता है। अपने आपको रोगी और बीमार समझने लगता है। जहां नींद थकान को दूर कर ताजगी देती है, वहीं तनावमुक्त भी करती है। नींद प्राणियों के लिए जीवन औषधि है। नींद वर्तमान समस्याओं से मुक्त कर गहरे शून्य में ले जाती हैं। नींद से लगता है कि व्यक्ति बेहोशी में चला गया किन्तु वह अवचेतन से जुड़कर अलौकिक संसार से संबंध स्थापित कर लेता है। जहां से नए ज्ञान विज्ञान की रश्मियों से एकाकार हो जाता है। नींद व्यक्ति की चेतना में स्फूरणा पैदा कर देती है। नींद सभी प्राणियों को आती है। लेते भी हैं ही। नींद जीवन के साथ जुड़ी स्वाभाविक क्रिया है। शरीर में प्रतिक्षण क्रिया-प्रतिक्रिया होती रहती है। इस क्रिया-प्रतिक्रिया से कोशिकाएं टूटती हैं, पुनर्निर्मित होती हैं। कोशिकाओं के पुनर्निर्माण में नींद की महत्वपूर्ण भूमिका होती है क्योंकि जब व्यक्ति नींद में होता है, उस समय जीवन को चलाने वाली आवश्यक शारीरिक क्रियाओं के अलावा अन्य क्रियाओं में ऊर्जा का व्यय नहीं होता और इस जीवन ऊर्जा से कोशिकाओं का नवनिर्माण होता है।

शरीर और मस्तिष्क में आई थकान को दूर करने में नींद की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। सन् 1974 में एक वैज्ञानिक पापेनहीयर ने जबरन जगाये गये जानवरों के 'सेरिब्रोस्पाइनल फ्लड' से वह तत्व प्राप्त कर लिया जिससे प्राणियों को नींद आती है। उन्होंने इस तत्व का नाम फेक्टर-एस रखा। अब तक की नई खोजों से यह पता लगा है कि ब्रेन स्टेम और हायपोथेलमस में दो ऐसे अलग-अलग क्षेत्र है जिनमें से एक के सक्रिय होने से नींद आने लगती है। हायपोथेलमस में एक केन्द्र सामान्य नींद का और एक गहरी नींद का है। सामान्य नींद पैदा करने वाले केन्द्र को राफी केन्द्र और गहरी नींद पैदा करने वाले केन्द्र को नीत्व स्थली कहा जाता है।

सन् 1982 में वैज्ञानिक पापेनहीयर एवं उनके सहयोगियों ने फेक्टर-एस की रासायनिक संरचना का भी पता लगा लिया। वैज्ञानिकों के अनुसार फेक्टर-एस गलाइ-को-पेपराइड है। उसके अन्दर ग्लूमेटिक ऐसिड एलाइन डाई अमिनोपिगेलिक ऐसिड एक निश्चित अनुपात में रहते हैं। जब व्यक्ति को गहरी एवं निर्बाध नींद आती हैं तो उठने के पश्चात वह अपने आपको तरोताजा और स्वस्थ महसूस करता है।

गहरी और बिना किसी व्यवधान की नींद, जिसके बाद व्यक्ति अपने आपको स्वस्थ और तरोताजा अनुभव करे श्रेष्ठ नींद कहलाती है। कम समय के लिए भी आई इस प्रकार की नींद व्यक्ति के लिए स्वास्थ्यप्रद होती है, जबकि लम्बे समय तक सोते रहने, उठने के बाद भी आलस्य का बना रहना और अपने आप में कमजोरी का अनुभव होना, बार-बार नींद का टूटना आदि लक्षणों वाली नींद अच्छी नींद नहीं होती है। नींद में बार-बार और डरावने सपने आना भी स्वस्थ नींद नहीं है। नींद की दवा लेने के पश्चात ही नींद आने की आदत भी अच्छे स्वास्थ्य का लक्षण नहीं है, क्योंकि दवा का प्रभाव समाप्त होते ही पुनः नींद उचट जाती है और धीरे-धीरे दवा की मात्रा भी बढ़ती जाती है, जो भविष्य में अनेकों प्रकार के हानिकारक परिपार्श्व परिणाम (साइड इफेक्ट) पैदा करती है। अपना दैनिक कार्य पूर्ण कर निश्चिंत होकर सोते ही गहरी नींद में चले जाने और समय पर जागृत हो जाने वाले व्यक्ति की नींद स्वस्थ नींद कहलाती है।

अनिद्रा का मूल कारण है रासायनिक असंतुलन। रासायनिक असंतुलन का कारण है अस्त-व्यस्त जीवनशैली, मस्तिष्क का असंतुलित उपयोग। मस्तिष्क के तीन कार्य हैं- स्मृति, चिंतन और कल्पना। किसी घटना को भूल नहीं पाना, अनावश्यक स्मृति पटल पर उस घटना का बार-बार उभारना, यदि किसी ने अपमान कर दिया उसको बार-बार स्मृति पटल पर लाना स्वयं के द्वारा स्वयं का अपमान है। अपमान करने वाले तो एक बार अपमान किया है किन्तु उसको बार-बार स्मरण करना अपने द्वारा अपना अपमान है। वह घटना तो शरीर के स्तर पर थी परन्तु आप उसे मानसिक और भावनात्मक रूप से अवचेतन मन तक पहुंचा कर स्थायी रूप से घृणा और विद्वेष का भाव पैदा करता है, जिससे चेतना में राग-द्वेष का भाव प्रबल हो जाता है। चिंतन भी बार-बार उसके प्रति नकारात्मक प्रकट होता है। निषेधात्मक चिंतन से विचारों की प्रक्रियाएं असंतुलित हो जाती है। कल्पना क्रम भी संतुलित नहीं रहता, इस असंतुलित कल्पना से स्वयं का ही अहित होता है। इनसे रासायनिक असंतुलन पैदा होता है। इस असंतुलन को दूर करने के लिए किसी घटना को याद रखना जितना आवश्यक है, वैसे ही किसी घटना को भूलना भी नितांत जरूरी है। स्मृति के साथ विस्मृति का प्रयोग होने से ही रासायनिक संतुलन पैदा हो सकता है। इसी तरह चिंतन और कल्पना को भी विधायक बनाना होता है जिससे अनिद्रा की समस्या का समाधान हो सकता है।

स्मृति, चिंतन और कल्पना को सम्यक् बनाना आवश्यक है। ये तीनों सम्यक् होते ही नींद का आना सहज हो जाता है।

-जैन विश्वभारती
पो.-लाडनूं-341306 (राजस्थान)

डॉ. ए.एल. श्रीवास्तव

लक्ष्मी का वाहन उलूक क्यों ?

आगम साहित्य तथा तंत्र ग्रंथों में लक्ष्मी को उलूकवाहिनी कहा गया है। अन्यत्र इसके साहित्यिक साक्ष्य दुर्लभ हैं। आश्चर्य स्वाभाविक है- कहां सुख, समृद्धि और सृजन की कल्याणमयी देवी लक्ष्मी और कहां अपरूप और अशुभ पक्षी उलूक। उलूक की बोली बड़ी डरावनी और अपशकुनकारी मानी जाती है। और तो और, उलूक के दर्शन भी अशुभ समझे जाते हैं। उलूक के चौड़े मुख में बड़ी-बड़ी गोलाकार भयंकर आंखें होती हैं और उसकी बोली तो रात के सन्नाटे में बड़ी डरावनी लगती है। अपने वीभत्स स्वरूप और अप्रिय बोली के साथ-साथ उलूक एक हिंसक पक्षी भी है। इसीलिए उत्तरी भारत में इसे 'उल्लू' और 'घग्घू' कहा जाता है। रोमवासी उलूक से घृणा करते हैं। उनका विश्वास है कि यदि उलूक ने रोम में प्रवेश न किया होता तो रोम-साम्राज्य का विनाश न हुआ होता। श्रीलंका में भी इसे अशुभ पक्षी माना जाता है।

तब फिर प्रश्न उठता है कि शुभदा लक्ष्मी का वाहन अशुभ उलूक कैसे हो सकता है? हमारी दृष्टि में इस प्रश्न का समाधान यों था- लक्ष्मी की आराधना विशेषकर दीपावली में अमावस्या के गहन अंधकार में की जाती है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि उस रात लक्ष्मी विचरण करती हैं और जिसका घर लिपा-पुता स्वच्छ पाती हैं, उसके घर पदार्पण करती हैं और उस घर को सुख-समृद्धि का वरदान देती हैं। तभी तो लक्ष्मी के स्वागतार्थ दीपावली के अवसर पर सभी लोग अपने-अपने घरों को साफ-सुथरा करते हैं और अनगिन दीप जलाकर प्रकाशित करते हैं। अमावस्या की उस अंधेरी रात में विचरण करने के लिए लक्ष्मी को वाहन कौन मिलता? रात में संसार के समस्त प्राणी सोते हैं, केवल उलूक ही जागता है और अपना शिकार खोजता है। दिन के प्रकाश में उलूक छिपकर सोया करता है। कालिदास ने इसीलिए उलूक को 'दिवाभीत' कहा है। हिमालय की कन्दराओं में दिन में भी अंधेरा छाया रहता है। इसी बात का वर्णन करते हुए कवि ने कुमारसंभव में कल्पना की है कि दिवाभीत (उलूक) के समान अंधकार भी दिन के प्रकाश से डरता है, इसीलिए कन्दराओं में जा बैठा है- लीनं दिवाभीतमिव अंधकारम्। अस्तु, रात में विचरण करने वाली लक्ष्मी और जागने वाला उलूक एक जैसी समान प्रकृति वाले निशाचरी जैसे हुए। तभी लक्ष्मी उलूकवाहिनी बनीं।

उलूक का लक्ष्मी से संबंध का एक कारण और भी है। भले ही भारत, श्रीलंका, रोम आदि कतिपय देशों में उलूक के प्रति जनमानस की धारणा अच्छी नहीं है। भारत में तो बुद्धिहीन लोगों को 'उल्लू' कह दिया जाता है। परन्तु संसार के जाने-माने पक्षी-विज्ञानी डॉ. सालेम अली के अनुसार उलूक एक बुद्धिमान पक्षी है और इसीलिए वह यूनानी ज्ञान-देवी एथेना का प्रतिरूप समझा जाता है। उलूक को बुद्धिमान और ज्ञानी समझने के कारण ही फिनलैंड के हेलसिंकी विश्वविद्यालय की विज्ञान पत्रिका 'एनालीज़ एकेडेमियाई साइण्टियेरम फेनिकाई' तथा लाटेविया की विज्ञान-पत्रिका 'प्रोसिडिंग्ज़ ऑफ लाटेवियन एकेडेमी ऑफ साइंसेज' के आवरण पृष्ठ पर छपे मोनोग्राम में उलूक का अंकन रहता है। यूनानी ऐसा विश्वास करते हैं कि जब जूपिटर ने दिवस-देवता गरुड़ का रूप धारण कर लिया तब उनकी पत्नी जूनो ने रात की रानी बनने के लिए उलूक का रूप ले लिया। यूनान में उलूक को अशुभ नहीं, शुभ और धार्मिक पक्षी माना जाता है।

उलूक बुद्धिमान होने के साथ-साथ संयमी और स्थितप्रज्ञ प्राणी भी माना गया है। अंग्रेजी के कतिपय कवियों ने उलूक का वर्णन इसी रूप में किया है। डॉ. शिवनारायण खन्ना ने 1992 ई. तक प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक हिन्दुस्तान (नई दिल्ली) के दीपावली अंक (अक्टूबर-1990) में अपने लेख 'आइए, लक्ष्मी-वाहन की उपासना करें' में अंग्रेजी कवियों का उलूक संबंधी काव्य उद्धरण प्रस्तुत किया है। ई. एस. रिचर्ड्स ने उलूक की स्थिर प्रज्ञता को देखा, समझा और सराहा।

श्रीमद्भगवद्गीता (2/69) में भी स्थितप्रज्ञ और संयमी को रात्रि में जागते रहने वाला बताया गया है, सोने के लिए रात्रि तो सामान्यजनों के लिए है या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी। उलूक भी रात्रि में जागता है और स्थितप्रज्ञ होकर रहता है। लक्ष्मी चंचला है और उलूक स्थितप्रज्ञ संयमी। संभवतः इसीलिए लक्ष्मी को स्थिर होकर रहने के लिए ही उलूक को उनका वाहन बनाना उचित है।

भारत में भी असम तथा बंगाल में उलूक की प्रजाति उत्तरी भारत में 'घुग्घू' से भिन्न होती है। वहां यह पक्षी आकार में बड़ा, श्वेत रंग का और अधिक बलशाली-शक्तिशाली होता है। संभवतः इसीलिए वहां के लोग उलूक की इस प्रजाति को गरुड़ कहते हैं। गरुड़ के समान यह पक्षी भी सांपों का शत्रु होता है। इस प्रजाति के उलूक को असम तथा बंगाल के लोग शुभ मानते हैं और वे इसी को लक्ष्मी का वाहन मानते हैं। किन्तु वे लक्ष्मी को उलूकवाहिनी के स्थान पर गरुड़वाहिनी कहते हैं। उनकी दृष्टि में उलूक दो प्रकार के होते हैं- एक लक्ष्मी उलूक (शुभ) और दूसरे अशुभ उलूक। असम-बंगाल के लोगों का लक्ष्मी को गरुड़वाहिनी कहना नितांत तर्कसंगत है। चूंकि विष्णु का वाहन गरुड़ है, इसलिए विष्णुप्रिय लक्ष्मी का वाहन भी गरुड़ ही होना चाहिए।

लक्ष्मी के उलूक वाहन का साहित्यिक साक्ष्य भले ही सामान्यतः न पाया जाता हो, परन्तु उसके पुरातात्विक साक्ष्य अवश्य उपलब्ध हैं जिनसे इस तथ्य की पुष्टि अवश्य हो जाती है कि कम से कम दसवीं सदी में वह लक्ष्मी का वाहन निर्विवाद और निस्संदेह था। दसवीं-बारहवीं सदी के बीच के तीन ऐसे मूर्ति-शिल्प पाये जा चुके हैं जिनसे इस तथ्य की पुष्टि हो जाती है। दो मूर्तियां बांग्लादेश से तथा एक उत्तरप्रदेश से प्रकाश में आयी हैं। रायगंज जनपद और दीनाजपुर (बांग्लादेश) में श्याम प्रस्तर की एक लक्ष्मी-नारायण की प्रतिमा में एक ऊंची पीठिका के पद्मासन पर चतुर्भुज विष्णु ललितासन में दायां पैर लटकाकर और बायां पीठिका पर ही मोड़कर

बैठे हैं। उनके बायें मुड़े पैर पर द्विभुजा लक्ष्मी सव्य ललितासन में अपना बायां पैर लटकाकर बैठी है। इस प्रतिमा में विष्णु का नीचे लटका दायां पैर गरुड़ के ऊपर तथा लक्ष्मी का लटकता बायां पैर सनाल पद्म पुष्प पर बैठे उलूक पर स्थापित है। स्पष्टत: गरुड़ विष्णु-वाहन के रूप में और उलूक लक्ष्मी-वाहन के रूप में अंकित है। बारहवीं सदी की यह प्रतिमा संप्रति रायगंज संग्रहालय में संरक्षित है। बांग्लादेश के कुष्माण्डी नामक स्थान से प्राप्त और संप्रति बंगाल राज्य पुरातत्व विभाग कोलकाता में संरक्षित लगभग उसी काल की चतुर्भुजा धान्य लक्ष्मी के पादपीठ के दायीं ओर एक भक्त तथा बायीं ओर एक उलूक बैठा है। लक्ष्मी की ये दोनों प्रतिमाएं उसे उलूकवाहिनी सिद्ध करती हैं। तीसरी मूर्ति उत्तरप्रदेश के जौनपुर स्थित तिलकधारी महाविद्यालय के संग्राहलय में संरक्षित है। दसवीं-ग्यारहवीं सदी के इस मूर्ति-शिल्प में अपने दोनों पंखों को फैलाये हुए एक पक्षी तथा उसके अगल-बगल पद्म-पुष्पों पर अभिषेक मुद्रा में खड़े गजों का अंकन है। पक्षी के पीछे एक अण्डाकार अथवा पद्मदल सरीखा अंकन है जो प्रभा मंडल का आभास देता है। उसी महाविद्यालय के प्रो॰ ओमप्रकाश सिंह के अनुसार वह पक्षी उलूक होना चाहिए। कमलदल के आकार वाले प्रभा मंडल तथा गज लक्ष्मी की प्रतिमा जैसे अभिषेकी गजों से उलूक पक्षी की उपस्थिति संपूज्य जान पड़ती है। पूरा मूर्ति शिल्प गजलक्ष्मी प्रतिमा का स्मरण दिलाता है। अंतर मात्र इतना है कि लक्ष्मी के स्थान पर उलूक की आकृति उकेर दी गई है। जिस प्रकार विष्णु के वाहन गरुड़ का और शिव के वाहन नन्दी का श्रद्धापूर्वक पूजन-अर्चन किया जाता है, लक्ष्मी वाहन उलूक का गजाभिषेक भी उसी प्रकार की भक्ति भावना का द्योतक है। अस्तु, उलूकवाहिनी लक्ष्मी का उल्लेख काल्पनिक नहीं, समाज-सम्मत है और साहित्य एवं पुरातत्व दोनों साक्ष्यों के निष्कर्ष पर खरा उतरता है।

वस्तुत: साधु-संत तथा सद्गृहस्थ जिस लक्ष्मी की पूजा करते हैं वह पद्मासना, पद्महस्ता और पद्मवासा लक्ष्मी है तथा गजों या दिग्गजों द्वारा अभिषिक्ता लक्ष्मी है- पदमस्था पद्महस्ता च गजोक्षिप्ता घटप्लुता। ऐसी लक्ष्मी की अनेक प्रतिमाएं भारत में पायी गयी हैं और प्राचीन वाङ्मय में उनका विविधपक्षी वर्णन उपलब्ध है। ऐसा कौन भारतवासी होगा जो लक्ष्मी की इस छवि से परिचित न हो। यही वह लक्ष्मी है जो सागर-मंथन से प्रकट हुई थी। लक्ष्मी के साथ पद्म तथा गज (ऐरावत) भी सागर से निकले थे। संभवत: इसीलिए पद्म लक्ष्मी का आसन और लीला-पुष्प बना तथा गजदेवी के अभिषेक में अनुरक्त हो गये। यह लक्ष्मी सुख, सौभाग्य, संपत्ति और सृजन की देवी है। सौभाग्य लक्ष्मी उपनिषद में उन्हें 'सकल भुवन माता' कहा गया है।

उलूकवाहिनी लक्ष्मी की उपासना तांत्रिकों के द्वारा की जाती है। तांत्रिक विभिन्न यौगिक क्रियाओं और जटिल साधनाओं की सिद्धि के लिए उलूकवाहिनी को प्रसन्न करते हैं तथा अभिलषित सिद्धियां प्राप्त करते हैं। इसीलिए उलूकवाहिनी का उल्लेख प्राय: तंत्र ग्रंथों में ही पाया जाता है।

-1-बी, स्ट्रीट, सैक्टर-9, भिलाई-490009 (छत्तीसगढ़)

समृद्धि और धन प्राप्ति का रहस्य

कौशल बंसल

लक्ष्मीजी का एक नाम कमला है। कमल उनका प्रिय आसन है। कमल की नाल पृथ्वी की तरफ संकेत करके बताती है कि जगत् की सारी सम्पदा धरती के गर्भ में छिपी है। कृषि, खनिज, तेल-कूप, विविध रत्न आदि सब धरती देती है।

समृद्धि उसे मिलती है, धन उसे उपलब्ध होता है, जो लगन से उद्योग करके धरती से उसकी अपरिमित संपदा प्राप्त करने की निरंतर चेष्टा करता है।

लक्ष्मीजी की अभय मुद्रा का आशय यह है कि समृद्ध व्यक्तियों को अपने व्यवसाय और समृद्धि की वृद्धि के लिए उन सब लोगों को जिनका पालन-पोषण उनके धन से होता है, इस प्रकार से सुरक्षा, सहायता, सुविधा, सेवा और सौहार्द प्रदान करके कष्टों, अभावों, चिंताओं और संदेहों से मुक्त करना आवश्यकता होता है। ऐसा करने में असंतोष, विरोध और बाधाओं का सामना उन्हें नहीं करना पड़ता।

महालक्ष्मी के जिस स्वरूप व महिमा की कल्पना की गई, उसमें उनका हाथ धन अर्पित करता हुआ हमें दिखाई देता है। लक्ष्मी का मुक्त हस्त से धन अर्पित करना इस बात का संकेत है कि समृद्धि की वृद्धि चाहने वाले व्यक्ति को सत्कार्यों के लिए खुले हाथों धन देने की परमार्थी प्रवृत्ति भी अपनानी चाहिए। दान से सदा लक्ष्मी संतुष्ट और प्रसन्न होती है, पुण्य और सम्मान में वृद्धि होती है और धन का उपार्जन सार्थक होता है।

लक्ष्मीजी के हाथ में कमल शोभित है और उनका आसन भी कमल है। कमल जल में उत्पन्न होता है, पर वह हमेशा जल के ऊपर उठा रहता है, जल के स्पर्श से दूर रहता है। यह इस बात का संकेत करता है कि मनुष्य के पास चाहे जितना भी धन हो जाय, उसे उसमें लिप्त नहीं होना चाहिए। यदि वह लिप्त होता है, तो उसमें भोग-विलास की लालसा प्रबल होती है, समृद्धि का ह्रास होने लगता है। उसे तो कमल की भांति निर्लिप्त रहना चाहिए।

लक्ष्मीजी के भक्तगण जब चित्रों में भगवान विष्णु के पांव दबाती हुई लक्ष्मी को देखते हैं तो वे महादेवी लक्ष्मी की असीम पति भक्ति और अथक पतिसेवा का ध्यान करके भाव-विभोर हो उठते हैं। मगर इसमें एक गूढ़ संकेत भी छुपा हुआ है। संकेत यह है कि लक्ष्मी की कृपा प्राप्त करने के लिए श्री नारायण के चरणों का आश्रय लेना अनिवार्य है, क्योंकि लक्ष्मी वहीं निवास करती है। जो लोग श्री नारायण से विमुख होकर लक्ष्मी को अपने घर में बसाने की इच्छा रखते हैं, वे लक्ष्मी की कृपा पात्र नहीं हो सकते। लक्ष्मी का अकेले आना शुभ नहीं है।

लक्ष्मीजी का वाहन 'उल्लू' भी किसी अमंगल की चेतनावनी का चिह्न है। पक्षियों में उल्लू अत्यंत मनहूस और अशुभ सूचक पक्षी माना जाता है। समृद्धि चाहने वाले जब श्री नारायण को भूलकर केवल लक्ष्मीजी की उपासना करते हैं, तो लक्ष्मीजी उनके पास उल्लू पर सवार होकर अकेली ही आती हैं और अपने साथ नाना प्रकार की बुरी प्रवृत्तियों, बुरे व्यसन और कुविचार लाती हैं। इसके विपरीत जब उनका आह्वान भगवान विष्णु के साथ किया जाता है, तो वे अपने पति के साथ वाहन गरुड़ पर बैठकर आती है। गरुड़ मंगलकारी, सौभाग्यदायक और सभी शुभ लक्षणों से युक्त है।

इसलिए प्रत्येक सनातनी हिन्दू परिवार को सुख, शांति, समृद्धि तथा धन की स्थायी बढ़ोतरी के लिए श्री लक्ष्मी-नारायण की साथ-साथ पूजा करनी चाहिए। यह मेरा तथा कई भक्तों का अनुभूत प्रयोग है।

गुंजन अग्रवाल

दीपावली इतिहास के आइने में

भारत का प्रसिद्ध त्योहार है दीपावली, जो कार्तिक माह की कृष्ण त्रयोदशी से शुक्ल द्वितीया तक मनाया जाता है। इन पांच दिनों में भी धनतेरस, नरक चतुर्दशी और कार्तिक कृष्ण अमावस्या का बड़ा ही महत्व है। भविष्यपुराण के अनुसार वामन भगवान ने कार्तिक अमावस्या के दिन दैत्यराज बलि से तीनों लोकों का राज्य दान में प्राप्त किया था और उससे प्रसन्न होकर यह तिथि दैत्यों को प्रदान की थी। उसी दिन कौमुदी उत्सव प्रवृत्त हुआ है। 'कु' पृथ्वी का वाचक है और 'मुदी' का अर्थ है प्रसन्नता। अत: पृथ्वी पर सबको हर्ष देने के कारण इसका नाम कौमुदी पड़ा।

महत्त्वपूर्ण कथा मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के विषय में वाल्मीकि-रामायण में आती है। जब श्रीराम 14 वर्षों के वनवास के बाद अयोध्या लौटे तो अयोध्यावासियों ने दीपों से नगर को सजाकर श्रीराम का स्वागत किया था। तभी से कार्तिक अमावस्या के दिन दीप जलाने की परम्परा प्रारंभ हुई।

द्वापरयुग की भी अनेक कथाएं इसमें जुड़ती गयीं। श्रीमद्भगवद्, विष्णु आदि पुराणों के अनुसार श्रीकृष्ण ने कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी के दिन कामरूप (असम) के अत्याचारी राजा नरकासुर का वध कर उसके अंत:पुर में कैद 16,100 कन्याओं का उद्धार किया था। अत: इसी आधार पर इस तिथि को नरक चतुर्दशी या नरका चौदस भी कहा जाता है।

जैन सम्प्रदाय में कार्तिक अमावस्या को बहुत अधिक महत्व दिया गया है। 527 ई.पू. इसी दिन 24वें तीर्थंकर वर्धमान महावीर को निर्वाण प्राप्त हुआ था। आचार्यों ने महावीर के प्रथम शिष्य गौतम स्वामी के आज्ञानुसार दीपों के प्रकाश में इस आध्यात्मिक ज्योति का आह्वान किया। भगवान महावीर पर गौतम स्वामी का प्रशस्त राज-भाव था। उनका आदेश था- ''प्रकाश के पावन पर्व दीपावली से हम अपनी आत्मा को आभ्यांतरिक ज्योति से प्रकाशित करें, यही दीपावली का संदेश है।'' अत: जैन समाज दीपावली का पर्व बहुत उत्साह से मानते हैं। भद्रबाहु कृत कल्पसूत्र में इसका विशद वर्णन है।

कार्तिक अमावस्या की महत्ता भारत में बहुत प्रचलित रही है। गुप्त सम्राट समुद्रगुप्त अशोकादित्य प्रियदर्शन ने अपनी दिग्विजय की घोषणा इसी दिन की थी। 269 ई.पू. गुप्त सम्राट चंद्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्य का राज्याभिषेक भी इसी दिन हुआ था। 58 ई.पू. इसी दिन उज्जयिनी के युवराज विक्रमादित्य ने तीन लाख शकों एवं हुणों को परास्त कर भारत से खदेड़ दिया था। छठे सिख गुरु हरगोविंद द्वारा इसी दिन 52 हिन्दू राजाओं की मुक्ति हुई थी। सिख सम्प्रदाय में यह घटना बंदी छोर दिवस के नाम से प्रसिद्ध है। स्वामी दयानंद सरस्वती ने सन् 1883 में इसी दिन अजमेर में प्राण-त्याग दिया था। स्वामी रामतीर्थ ने सन् 1906 में टिहरी में जल-समाधि इसी दिन ली थी। भारतीय मजदूर संघ के संस्थापक श्री दत्तोपंत ठेंगरी का जन्म सन् 1920 में इसी दिन हुआ था। सन् 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान लोकनायक जयप्रकाश नारायण इसी दिन हजारीबाग सेंट्रल जेल से फरार हुए थे। भूदान आंदोलन के प्रणेता आचार्य बिनोवा भावे का स्वर्गारोहण भी दीपावली के दिन ही 1982 में हुआ था।

प्रसिद्ध अरबी विद्वान और इतिहासकार अलबरूनी (973-1048) जब महमूद गजनवी के साथ भारत आया तब उसने यहां के संबंध में एक पुस्तक की रचना की जिसमें उसने दीपावली का वर्णन किया है। उसके वर्णनों से पता चलता है कि महमूद गजनवी जैसे दुर्दांत लुटेरे के आक्रमणों के समय भी हिन्दू-समाज अपने त्योहारों को भूल नहीं सका था बल्कि उस समय भी धूमधाम से मनाता था। 11वीं सदी के आस-पास अबदुर्रहमान भारत में दीपावली का वर्णन करते हुए लिखता है- ''बड़े-बड़े नगरों की भव्य इमारतों को दीपों तथा चंद्राकिरणों से सजाया जाता था।''

1119 ई. में चालुक्य नरेश त्रिभुवन मल्ल के कन्नड़ शिलालेखों में दीपावली का उत्कृष्ट वर्णन मिलता है। सुप्रसिद्ध गुजरात नरेश सिद्धराज जयसिंह के काल में भी गुजरात में मनायी जाने वाली दीपावली का मेरुतुंगाचार्य ने अपनी 'प्रबंध चिंतामणि' में अपूर्व वर्णन किया है। सरस्वतीपुराण के अनुसार सिद्धराज जयसिंह तथा सिलाहर नरेशदेवी लक्ष्मी के अनन्य भक्त थे। उनकी राजधानियों में दीपावली के दिन प्रजा के लिए नाना प्रकार के खेल दिखाये जाते थे और नरेश दान किया करते थे।

विजयनगर सम्राटों के समय इटली का यात्री निक्कोलो डा काउंटी (1395-1469) भारत आया था। उसने विजयनगर साम्राज्य में दीपावली के अवसर पर दिन और रात में सतत जलने वालों दीपों का वर्णन किया है। इस अवसर पर धनी व्यापारी अनेक द्रव्य दान देकर दीपावली की गरिमा को सार्थक बनाया करते थे। विजयनगर में यह पर्व आश्विन कृष्ण चतुर्दशी को मनाया जाता था। यह पर्व साम्राज्य को विजय, धन तथा गरिमा दिलाने वाला समझा जाता था। इस दिन समस्त राज-परिवार प्रात:काल स्नानादि करके साम्राज्य-लक्ष्मी की उपासना किया करता था।

मराठों के स्वर्णयुग में दीपावली की महत्ता पुन: बढ़ी। सन् 1727-1794 के मध्य मराठा सेनापति महादजी सिंधिया ने पेशवा माधवराव को लिखा कि कोटा (राजस्थान) में दीपावली चार दिनों तक मनायी जाती थी। इस अवसर पर कोटा के महाराजा नगर के बाहर विशाल आतिशबाजी का प्रदर्शन किया करते थे। इस आतिशबाजी में रामायण के अनुसार रावण की नकली लंका बनायी जाती थी। जिसे ही 'दारू की लंका' कहा जाता था। प्रारंभ में हनुमान की पूंछ में आग लगायी जाती थी। इसके बाद हनुमान तोप से उड़कर लंका को आग लगा देते थे। अगले वर्ष पेशवा ने भी पूना के पार्वती पर्वत पर कोटा के महाराजा की तरह ही 'दारू की लंका' बनायी। यह आतिशबाजी पूना में 15 दिनों तक चलती रही। ■

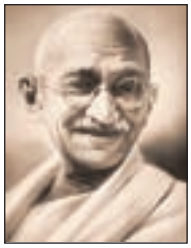

गांधी जयंती पर विशेष

अहिंसा नम्रता की पराकाष्ठा है

मोहनदास करमचंद गांधी

विद्यार्थियों के शरीर और मन के शिक्षण की अपेक्षा उनकी आत्मा को शिक्षित करने में मुझे बहुत अधिक श्रम करना पड़ा। आत्मा का विकास कराने में मैंने धर्म की पोथियों का सहारा कम लिया था। मैं मानता था कि विद्यार्थियों को अपने-अपने धर्म के मूल तत्व जानने चाहिए और अपनी धर्म पुस्तकों का साधारण ज्ञान उन्हें होना चाहिए। उसे मैं बुद्धि के विकास का एक अंग मानता हूं।

आत्मशिक्षण शिक्षा का एक स्वतंत्र विषय है, यह बात मैंने टालस्टाय आश्रम के बालकों की शिक्षा आरंभ करने से पहले ही समझ ली थी। आत्मा का विकास करने का अर्थ है चरित्र का गठन, ईश्वर का ज्ञान। यह ज्ञान प्राप्त करने में बालकों को मदद की जरूरत होती है। उसके बिना कोई भी दूसरा ज्ञान व्यर्थ है और वह हानिकारक भी हो सकता है।

यह वहम सुना है कि आत्म ज्ञान चौथे आश्रम में मिलता है। पर यह सार्वजनिक अनुभव है कि चौथे आश्रम तक इस अमूल्य वस्तु की मुलतवी रखते हैं, वे कभी आत्म ज्ञान नहीं पाते।

तब बच्चों को आत्मिक शिक्षा कैसे दी जाए? मैं वहां बालकों से भजन गवाता था, नीति की पुस्तकें पढ़कर सुनाता था। पर उससे संतोष न होता था। ज्यों-ज्यों उनसे संपर्क बढ़ता गया, त्यों-त्यों मैंने देखा कि यह ज्ञान पोथियों द्वारा तो नहीं दिया जा सकता। शरीर की शिक्षा, शरीर की कसरत से दी जा सकती है, बुद्धि की बुद्धि की कसरत से। वैसे ही आत्मा की आत्मा की कसरत से। आत्मा की कसरत शिक्षक के आचरण से ही हो सकती है। मैं झूठ बोलता रहूं और अपने शिष्यों को सच्चा बनाने की कोशिश करूं, तो वह बेकार ही जाएगी। कोई व्याभिचारी शिक्षक शिष्यों को संयम कैसे सिखा सकता है? मैं व्यापारियों के मुंह से यह सुनता आ रहा था कि व्यापार में सत्य का मेल नहीं बैठ सकता। वे व्यापार को व्यवहार कहते हैं। सत्य को धर्म कहते हैं। और दलील यह देते हैं कि व्यवहार एक चीज है, धर्म दूसरी। उनका यह विश्वास है कि व्यवहार में शुद्ध सत्य चल ही नहीं सकता। मैंने इसका डटकर विरोध किया। राग-द्वेष से भरा हुआ मनुष्य सरल भले ही हो जाए, वाणी का सत्य भले ही पा ले, पर उसे शुद्ध सत्य नहीं कहा जा सकता।

जहां तक मुझे याद है कि वकालत पेशे में मैंने कभी झूठ से काम नहीं लिया। बचपन में सुनता था कि इसमें झूठ बोले बिना नहीं चल सकता। लेकिन मुझे झूठ बोलकर न पद लेना था और न पैसा। मेरे अंतर में भी सदा यही रहता था कि यदि मुवक्किल का मुकदमा सच्चा हो तो वह जीत जाए और झूठा हो तो हार जाए। मुवक्किल से पहले ही कह देता था- झूठा केस हो तो मेरे पास मत आना। गवाह को सिखाने-पढ़ाने की तो मुझ से उम्मीद ही न रखना। वकालत में मेरी साख तो ऐसी ही हो गई कि झूठे मुकदमे मेरे पास आते ही न थे। ऐसे मुवक्किल भी मेरे पास थे, जो अपने सच्चे मामले तो मेरे पास लाते थे और जिनमें जरा खोट-खराबी होती, उन्हें दूसरे वकीलों के पास ले जाते थे।

अहिंसा को मैं जितना पहचान सका हूं, उससे सत्य को अधिक पहचानता हूं। सत्य की मेरी पूजा ही मुझे राजनीति में घसीट ले गई है। जो कहता है कि धर्म का राजनीति से संबंध नहीं है, वह धर्म को जानता नहीं है, यह कहने में मुझे संकोच नहीं है। अहिंसा व्यापक वस्तु है। मनुष्य क्षण भर भी बाह्य हिंसा के बिना नहीं जी सकता। खाते-पीते, उठते-बैठते सब कर्मों में इच्छा से या अनिच्छा से, कुछ न कुछ हिंसा वह करता ही रहता है। उस हिंसा से निकलने का उसका प्रयास हो, उसकी भावना हो, वह छोटे से छोटे प्राणी का भी अहित न चाहे और यथाशक्ति उसे बचाने की कोशिश करे, तो वह अहिंसा का पुजारी है। अहिंसा नम्रता की पराकाष्ठा है और इस नम्रता के बिना मुक्ति किसी काल में नहीं है, यह अनुभव सिद्ध बात है।

(साभार : बापू की डायरी 'सत्य के साथ मेरे प्रयोग' से उद्धृत)

तीन गुण

शिवचरण मंत्री

जीवन में सफलता प्राप्ति के तीन सूत्र हैं- नियमितता, व्यवस्थिता एवं उपयोगिता। नियमितता का अर्थ है पूर्व निश्चित नित्य कामों को पूरा करना। इस प्रकार नित्य प्रति निश्चित काम करने से व्यक्ति की नियमितता की आदत बन जायेगी। यदि नियमितता में बार-बार परिवर्तन किया जाता है तो नियमितता नहीं आयेगी और सारी व्यवस्था गड़बड़ा जायेगी और सफलता नित्य प्रति दूर होती जायेगी।

दूसरा गुण है व्यवस्था का। व्यवस्थितता का अर्थ है काम को व्यवस्थित रूप से करना। अव्यवस्था बड़ी बुरी, अटपटी लगती है। किसी स्थान पर अव्यवस्थित ढंग से रखा सामान जैसे आंखों को बुरा लगता वैसे ही अव्यवस्थित ढंग से काम करना सफलता को दूर भगाना है, असफलता को निमंत्रित करना है। जहां काम आए सूई कहां करे तलवार की तरह जहां जिस वस्तु की आवश्यकता हो उसी का प्रयोग किए जाने से व्यक्ति को सफलता मिलती है।

मानव जीवन में सफलता का तीसरा मंत्र है उपयोगिता। आवश्यकतानुसार ही वस्तु काम में लेना ही उपयोगिता है। जीवन में आवश्यकताओं को कम करना ही उपयोगिता है। एक ही जूता जोड़ी से काम जब चल सकता है तो दर्जन भर जूते जोड़ी क्यों रखी जाए। अपरिग्रह की भावना से जहां आत्मा शुद्ध होगी वहीं परिग्रह से शरीर में आलस्य आयेगा। अत: सफलता प्राप्ति के लिए मानव को उपयोगिता के गुण पर ध्यान देना चाहिए।

-श्रीनगर, अजमेर-305025 (राज.)

जितेन कोही

हंसना सबसे प्रभावी योग है

एक सुन्दर राजकुमारी थी। एक दिन अचानक राजकुमारी उदास हो गई। बिल्कुल चुप। राजा ने बड़े जतन किए पर उसकी उदासी दूर न हुई। राजा ने ऐलान करवा दिया, जो राजकुमारी को हंसा देगा, उसे मुंहमांगा इनाम दिया मिलेगा।

राजा की बात फैली, ज्यों जंगल की आग। एक से बढ़कर एक लोग आए, पर किसी के प्रयास काम न आए। फिर एक दिन एक बेढ़ब मोटा आदमी आया। उसका पेट खूब फूला हुआ था, खूब बड़ा था। उसने फूलकुमारी के सामने अपना पेट हिला-हिलाकर हंसना शुरू किया। वो जितना हंसता जाता उसका पेट उतनी ही जोर से हिलता। वो इतना हंसा, इतना हंसा कि हंसते-हंसते उसका पेट ही गिर गया। कपड़ों के भीतर छुपाया हुआ नकली पेट ढीला होकर नीचे सरक गया।

विदूषक का भेद खुलते देख राजकुमारी को हंसी आ गई। और उसका हंसना था कि राजा खुशी से नाचने लगा, दरबारी झूमने लगे, चिड़िया चहचहाने लगीं, पेड़ झूमने लगे, हवा गुनगुनाने लगी। उन्हें हंसता देख सब हंसने लगे। पूरा राज्य हंसने लगा।

कहानी का संदेश यह है कि रोते हुए को देखकर कोई नहीं रोता, लेकिन एक हंसते हुए आदमी को देखकर दूसरा भी हंसने लगता है। हंसी संक्रामक है, बहुत तेजी से फैलती है।

जब हम खुलकर हंसते हैं तो हमारे शरीर में कंपन होता है। जिस तरह जॉगिंग करने से हमारे शरीर के बाहरी अंगों का व्यायाम होता है, उसी तरह हंसने से शरीर के आंतरिक अंगों की मालिश होती है। इसलिए कहते हैं- हंसी शरीर की आतंरिक जॉगिंग है। खुलकर हंसने से हमारा ड्रायफाम फैलने-सिकुड़ने लगता है, जिससे आंतरिक अंगों जैसे- लिवर, गुर्दा, किडनी, आंतें, बाहरी त्वचा बार-बार खुलती सिकुड़ती है, जिससे इन तमाम अंगों की मालिश होती है।

ठहाके लगाने से शरीर में सिरोटिन की मात्रा बढ़ जाती है, जिससे हमारे अंदर पॉजिटिव ऊर्जा उत्पन्न होती है। ये हमारी आंतरिक शक्ति को जाग्रत कर शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाती है। शादियों में अक्सर देखा जाता है कि बुजुर्ग जो बिना सहारे के चल भी नहीं पाते, उत्साह से नाचने-गाने लगते हैं। उनके शरीर में इतनी ऊर्जा, इतनी शक्ति कहां से आती है? प्रसन्नता, हास्य का भाव, खुशी-उमंग उनके शरीर में इतनी ऊर्जा पैदा कर देती है कि उनकी बूढ़ी कमजोर हड्डियां भी झूमने लगती हैं। आनंद का उत्सव समाप्त होते ही वे पुनः अपने बिस्तर में पड़ जाते हैं। हास्य हमारे शरीर को अतिरिक्त ऊर्जा प्रदान करता है।

हंसने के दौरान मस्तिष्क में वे हारमोन्स पैदा होते हैं जिनसे कोरटीसोल की मात्रा कम कम होती है। आप कभी एक अभ्यास करके देखें, हंसने के दौरान आपका मस्तिष्क शून्य की स्थिति में पहुंच जाता है।

कई बार हमें बिना कारण ही सब कुछ बुझा-बुझा सा, बेकार सा लगने लगता है। जिंदगी बड़ी नीरस, बोझिल जान पड़ती है। ये एक किस्म की नेगेटिव सोच है, जिसका सीधा संबंध हमारे अवचेतन मस्तिष्क से है। लगातार असफलताएं, परेशानियां, कठिनाइयां हमारे इस अवचेतन मस्तिष्क में एक किस्म की नकारात्मकता पैदा करती जाती है। जो मस्तिष्क में कुछ नेगेटिव हारमोन्स उत्पन्न करती हैं। कोरटीसोल उनमें से ही एक है।

कोरटीसोल बढ़ने से हमारे अंदर न केवल नकारात्मक भाव उत्पन्न होते हैं, बल्कि हमारे अंदर एक किस्म की बेचैनी भी उत्पन्न होने लगती है। इससे हमारा बल्ड प्रेशर असंतुलित होने लगता है। कोरटीसोल की मात्रा और बढ़ जाने से सांस लेने में असुविधा होने लगती है।

हंसने के दौरान मस्तिष्क में वे हारमोन्स पैदा होते हैं जिनसे कोरटीसोल की मात्रा कम कम होती है। आप कभी एक अभ्यास करके देखें, हंसने के दौरान आपका मस्तिष्क शून्य की स्थिति में पहुंच जाता है। आप दो काम एक साथ नहीं कर सकते। हंसते भी रहें और कुछ सोचते भी रहें। हंसना एक प्रकार का मेडिटेशन है। हंसी शरीर के लिए टॉनिक का काम करती है। जीवन की आपाधापी में हम हंसना भूल गए हैं।

भृगुवंशी, भार्गव गौत्रीय महानायक ब्राह्मण परशुरामजी भारतीय संस्कृति के एक महान जननायक स्तंभ रहे, जिन्हें दशावतारों में मान्यता मिली।

ललित शर्मा

भारतीय संस्कृति और मूर्तिकला के महानायक परशुराम

भारतीय धर्म संस्कृति के वैष्णव अवतारों में विशेष तौर पर दशावतारों में जिन पौराणिक देवों, महापुरुषों का उल्लेख हुआ है, उनमें परशुरामजी का उल्लेख भी अपनी विशिष्टता लिये हुए है। वे भृगुवंश में उत्पन्न होने से भार्गव गौत्र से सम्पृक्त माने गये। लोक कल्याण और परमार्थ परम्परा के सेवक होने के नाते कालान्तर में ब्राह्मणों ने अपना आदर्श महानायक अधिकृत किया। इस प्रकार परशुरामजी को भगवान का अवतार मान उनकी कल्पनाएं व वीरोचित कार्य तो जन-जन तक पहुंची, परन्तु इतिहास, संस्कृति और पुरातत्व में वे भुला दिये गए। दशावतारों में मत्स्य, कूर्म व वराह आदि का तो खूब उल्लेख हुआ, परन्तु परशुराम का उल्लेख व जानकारी नगण्य रही।

परशुरामजी का जन्म अक्षय तृतीया को हुआ था। उनकी जयंती उत्तर भारतीय क्षेत्र के मथुरा और काशी के मध्य प्रांतों तथा दक्षिण में परशुराम क्षेत्र के भूभाग में विशिष्टता लिए मनायी जाती है। जिन ब्राह्मणों ने अग्निपुराण, विष्णुपुराण, भविष्यपुराण, स्कंधपुराण, विष्णुधर्मेत्तरपुराण व श्रीमद्भगवद् को थोड़ा भी समझने का प्रयास किया हो जानते होंगे कि वैदिक युग के अंत समय में भृगु वंश में 'यमदग्नि' नामक एक महान तपस्वी का जन्म हुआ था। तब समस्त भूमण्डल में यह वंश बड़ी ही प्रतिष्ठा का धनी था। भृगु के पुत्र शुक्राचार्य रहे जो रामायण व उससे पूर्व दैत्यों के वंशज गुरु रहे थे और उन्होंने कई बार दैत्यों को अपनी योग संजीवनी विद्या से जीवंत कर दैवों की नाक में दम कर डाला था। इन्द्र इस कारण अपनी कुर्सी छीनने के भय से सदैव इन तपस्वी ब्राह्मण से भयाक्रांत रहता तथा विष्णुदेव का शरणागत होता फिरता था। भृगुवंश में ही महर्षि च्यवन हुए थे, जिनसे वनवास के दौरान राम, लक्ष्मण, सीता ने भेंट की थी। च्यवन ऋषि को राजा शर्यांति ने अपनी कन्या ब्याही थी, जिनसे ऋचित तथा और्व नामक ऋषि हुए जिन्होंने भगवान राम के पूर्वज महाराज सगर को युद्धकला में पारंगत कर एक आदर्श ब्राह्मण की परम्परा स्थापित की थी। इतिहास के ये अध्याय हैं जिन्हें स्वयं ब्राह्मणों ने भी आज पूरी तरह भुला दिया है।

परशुरामजी बाल्यकाल से ही बड़े संस्कारी, आज्ञाकारी, सत्यवान, धीर एवं वीर थे। परिष्कृत संस्कारों के कारण बाल्यकाल से ही उनकी प्रतिभा का प्रकाश देशभर में प्रकाशित हो गया था। परन्तु स्वभाव उग्र था और इसी कारण जब वे रौद्र रूप धारण करते थे, तब किसी की नहीं चलती थी। सद्गुणी व आज्ञाकारी होने से वे अपनी जननी व पिता के भी अधिक प्रिय थे। ऐसा कहा जाता है कि तत्कालीन क्षत्रियों ने ब्राह्मणों पर 21 बार अत्याचार किये, इसी से दृढ़ प्रतिज्ञ हो परशुरामजी ने भी अनेक प्रतिरोध स्वरूप यह प्रतिज्ञा की थी कि 'मैं अमोघ पराक्रम और बाहुबल से 21 बार ही पृथ्वी को क्षत्रीय से हीन कर दूंगा एवं परमार्थ हेतु दान दूंगा।" इस घटना को आज भी ब्राह्मण यदा-कदा गुहारते उचारते है। एक बार परशुरामजी ने अपने पिता की आज्ञा को फरसे (परशु) से पूर्ण किया था, तभी से उन्हें परशुराम कहा गया। परशुरामजी आजीवन ब्रह्मचारी रहे। वे अद्भुत दानवीर और तेजस्वी थे। वे रावण के पौरुष से बेहद प्रभावित थे तथा भगवान शिव के कट्टर समर्थक एवं उपासक थे। वैष्णवों में रामावतार के बाद वे तपस्या करने चले गये थे। मान्यता है कि मानसरोवर तक उनका प्रभाव था तथा वहां के जल क्षेत्र में वे अपना परशु धोया करते थे। पुराण उन्हें 21 बार क्षत्रियों के वध करने की घटना को हैहय वंश के कार्तवीर्य सहस्त्रार्जुन से भी जोड़ते है, जो नर्मदा भूभाग का सम्राट था। इसी का वध कर परशुरामजी ने रक्त से भरे 21 तालाबों का निर्माण करवाया था। वास्तव में सहस्त्रार्जुन, परशुरामजी के पिता यमदग्नि का साढू भाई था। कामधेनु गाय के विवाद में उसने यमदग्नि ऋषि का वध कर डाला था। इसी घटना के प्रतिरोध रूप में परशुरामजी ने उसकी भुजायें भंग कर उसके वंश को अपने बाहुबल से समूल सहित उखाड़ फेंका था, जबकि सहस्त्रार्जुन ने पौलत्स्य रावण को बंदी बना कर रखा था। वहीं रावण के बल पर बाद में परशुरामजी उससे बेहद प्रभावित हुए थे। परशुरामजी ने अपने पिता के शीश को पुनः धड़ से जोड़कर यज्ञादि करने पर पिता को संकल्प शरीर की प्राप्ति करवा कर उन्हें सप्तऋषियों में स्थान दिलवाया था। इस प्रकार वे भारतीय संस्कृति में एक महान आदर्श रहे।

परशुरामजी की पूजा करने वाले लोगों के अस्तित्व का ज्ञान पश्चिमी भारत के एक शिलालेख से मिलता है। शक सम्राट ऋषभदात (119-21 ई.) के नाशिक शिलालेख के अध्ययन में 'रामतीर्थ' का उल्लेख है, जो परशुरामजी का आश्रम था। जिसकी स्थिति शुर्पारक के निकटस्थ थी। संभवतः परशुरामजी के वीर पूजक ब्राह्मण किसी समय यहां बड़ी संख्या में थे, जिन्हें समादृत करने के लिए परशुरामजी वैष्णव दशावतार में स्वीकृत किये गये। विशेष रूप से क्षात्र स्वाभावी होने से ब्राह्मण उन्हें अपना इष्ट मानते हैं। वे आवेशावतार है, जिन्होंने अपना अवतारपन दशरथि राम को समर्पित किया था।

खजुराहो तथा अमरेली (गुजरात) में परशुरामजी की दो हस्त मूर्तियों को छोड़कर शेष मूर्तियां चतुर्बाहु मिली है। उनके एक हाथ में परशु, तीन में धनुष, बाण, शंख, चक्रादि में से एक है, जबकि खजुराहो की चतुर्बाहु मूर्ति में परशुरामजी अपनी शक्ति के साथ आलिंगन मुद्रा में प्रदर्शित है। दशावतार पट्टों व विष्णु मूर्तियों की प्रभावलियों में परशुरामजी की मूर्तियां परशु हाथ में लिए हुए है। ढ़ाका से प्राप्त परशुरामजी की मूर्ति जटामुकुट युक्त है यद्यपि उनके चार भुजाएं है किन्तु उनमें परशु के साथ शंख, चक्र, गदा है। इस मूर्ति का आकार पौराणिक ग्रंथों में वर्णित निर्देशों के अनुरूप मिलता है।

सारांशतः भृगुवंशी, भार्गव गौत्रीय महानायक ब्राह्मण परशुरामजी भारतीय संस्कृति के एक महान जननायक स्तंभ रहे, जिन्हें दशावतारों में मान्यता मिली। भारत के ब्राह्मणों को चाहिए कि वे अपने इस आदर्श महानायक के सिद्धांतों को अपने आचरण में उतारे तथा अपनी सांस्कृतिक गरिमा के उत्थान को समर्पित रहे, तभी सही मायने में वे परशुरामजी के वंशज कहलाने के हकदार हैं।

–जैकी स्टूडियो, 13 मंगलपुरा स्ट्रीट झालावाड़-326001 (राजस्थान)

सेहत

रूपनारायण काबरा

तनाव अच्छा सेवक है पर खतरनाक

जीवन को ढंग से जीने के लिए, आनन्द से जीने के लिए जीवन के महत्व को समझना होगा और इसमें रुचि लेनी ही होगी। जो जीवन में रुचि नहीं लेता है वह दयनीय है, उसका जीना भी भला कोई जीना है। जीवन में दुख ही दुख है, यह सोचना ही गलत है और यह सोच ही सारे दुख और तनाव का आधारस्तंभ है। सामान्यत: दुखी प्रतीत होने वाले यथा अभावग्रस्त, शोकग्रस्त, रोगग्रस्त अथवा निराशाग्रस्त के लिए भी बहुत कुछ है जीने के लिए। प्राकृतिक सौन्दर्य, सुंदर पुस्तकें और सबसे सुंदर, सबसे बड़ी संपदा है 'आशा'। यही सबसे बड़ा संबल है और इसी के सहारे विज्ञजन कहते हैं ''रात भर का है मेहमां अंधेरा, किसके रोके रुका है सबेरा।'' और यह भी कि, ''रात जितनी ही संगीन होगी, सुबह उतनी ही रंगीन होगी।''

मनुष्य को इस कालचक्र को समझना है, स्वीकारना है कि दु:ख हमेशा नहीं रहता है, धूप-छांह की तरह आता भी है और चला भी जाता है। अभाव, उलझनें, रोग, शोक, हानि, अपयश ये जीवन के क्रम में हैं। किसी के हिस्से कम और किसी के हिस्से ज्यादा आते हैं। उलझन और समस्या वस्तुत: बाहर नहीं है, मन में है। ऐसे भी लोग हैं जो समस्याओं को आमंत्रित करते हैं, चुनौतियों को स्वीकारते हैं उनके साथ संघर्ष में आनन्द का अनुभव करते हैं, एवरेस्ट का अभियान या ध्रुवों की खोज इत्यादि अनेकों उदाहरण हैं। अत: समस्या वस्तुत: वही है जिसे मन समस्या मान ले बाहर तो केवल परिस्थितियां हैं। उलझनों में उलझकर घुटने की बजाय उन्हें स्वीकार कर चुनौती देने में ही मुक्ति है और संघर्ष का सुख तो है ही।

जीवन में यथार्थ को स्वीकार लेना और उसके साथ अपने को 'एडजस्ट' अर्थात् समायोजित कर लेना ही बुद्धिमता है। समझौता एवं सामंजस्य तो जीवन में पग-पग पर आवश्यक है। सुखी एवं स्वस्थ जीवन वस्तुत: समझौतों की शृंखला ही तो है। अपने भाग्य को कोसना, हीन भावना से ग्रस्त होना नितांत अनुचित है। क्योंकि इससे लाभ तो कुछ होता नहीं, हानि अवश्य हो जाती है। प्रत्येक स्थिति में प्रसन्न रहना तो दुर्भाग्य को चुनौती देना है। ''वह इंसान क्या जो ठोकरें नसीब की ना सह सके'' और ''मंजिल पे जिन्हें जाना है, शिकवे नहीं करते। शिकवों में जो उलझें हैं, पहुंचा नहीं करते।'' जब अपने ही पराये हो जाएं, धोखा करें तो यही मान लीजिए कि संसार का यही रूप है अर्थात् संसार स्वार्थपूर्ण है।

एक बात और ध्यान देने की है कि संकट की आशंका से ग्रस्त नहीं होना चाहिए। ''ऐसा हो जायेगा तो क्या करूंगा'', ''कहीं ऐसा न हो जाए'' इत्यादि विचार भयाक्रांत करते हैं और भय घर में घुसा हुआ सबसे महान शत्रु है। उसे भगाना ही होगा। भय से संदेह उत्पन्न होता है, यह आत्मविश्वास एवं साहस को तोड़कर शक्ति को क्षीण कर देता है, शक्ति के स्रोत को ही सुखा डालता है। तात्पर्य यह है कि विषम परिस्थितियां यदि आने को ही हैं तो उन पर चिंतन करें, चिंता नहीं। उनका हल ढूंढें, उनका सामना करने का साहस जुटाएं। भय हमारी बुद्धि एवं आत्मविश्वास की हार है। कितना सुंदर कथन है, ''मनुष्य सृष्टि का शृंगार है लेकिन भयभीत मनुष्य तो सृष्टि की निकृष्टम वस्तु है।''

व्यस्तता ही सबसे प्रभावी चिंता-तनावहारी है क्योंकि व्यस्त को चिंता की फुर्सत कहां। एक प्रोफेसर साहब अनिद्रा के शिकार हो गये पर उन्होंने उस अनिद्रा से मिलने वाले वक्त का लाभ उठाया और विशेष अध्ययन एवं सृजन से महान लेखक बन गये। उन्हें यश, अर्थ, प्रशस्ति, सृजन-सुख, प्रतिष्ठा सभी कुछ मिल गया और नींद तो इन सबकी अनुगामी होती है। अनिद्रा वरदान सिद्ध हो गई।

स्वाभिमान भी एक जबरदस्त भ्रांति हैं। स्वाभिमान से विनयशीलता एवं सामंजस्य सदैव श्रेष्ठ है क्योंकि स्वाभिमान प्राय: मिथ्या अहं भाव उत्पन्न कर मानसिक क्लेश का कारण तो बनता ही है लोगों में अप्रिय भी बना देता है। झूठी शान सदा दुख देती है। मूंछें नीची, झंडा ऊंचा'' मानकर भी कार्य सिद्ध कर लेना बुद्धिमानी है। हनुमान ने सुरसा के साथ यही नीति अपना कर विजय पाई थी।'' सकल सोक दायक अभिमाना'', इसके समझ लेने में ही सार है।

हम अपने अनुचित व्यवहार से भी हमारे चारों ओर एक दुख का घेरा पैदा कर लेते हैं। कठोर व्यवहार, अपशब्द, तिरस्कार, ताड़ना, दुर्नीति एवं दुर्व्यवहार घर में, कार्यालय में, समाज में सभी जगह में अप्रिय एवं अस्वीकार्य बना देता है और हम दुखी हो जाते हैं। भले ही हम बाहर से कठोर लगें पर हमारा आंतरिक प्रेम, क्षमा, उदारता अवश्य ही अनुभव होनी चाहिए और तब कठोरता का अपना अपेक्षित प्रभाव होगा सकारात्मक एवं सार्थक।

तनाव हमारे चिंतन का एक सहज प्रभाव है, एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। तनाव क्रियाशीलता को तीव्र एवं प्रखर करने हेतु आवश्यक जैविक प्रक्रिया है। परीक्षा में, प्रतियोगिता में हार-जीत का तनाव ही तो विशेष प्रयास हेतु उत्प्रेरित करता है। किसी लक्ष्य प्राप्ति का तनाव बुरा नहीं है पर तनाव यदि संपूर्ण व्यक्तित्व पर हावी हो जाए तो वह एक समस्या बन जाता है और मस्तिष्क सही निर्णय लेने की स्थिति में नहीं रहता है। अत: तनाव को तो आपका सेवक ही बना रहने दीजिए, मालिक नहीं।

-ए-438, किशोर कुटीर, वैशाली नगर
जयपुर-302001 (राजस्थान)

हमारे संरक्षक

'समृद्ध सुखी परिवार' मासिक पत्रिका के नियोजित प्रकाशन के लिए 11,000/- रुपये की राशि प्रदत्त करने वाले संरक्षक सदस्य होंगे जिन्हें पत्रिका आजीवन नि:शुल्क प्रेषित की जायेगी और पत्रिका में उनका नाम प्रकाशित किया जाएगा। हमारे प्रथम संरक्षक सदस्य हैं-

श्री जयंतीलाल वालचंद खींचा

निवासी घानेराव, प्रवासी अंधेरी वेस्ट मुम्बई

अंक-विज्ञान

नीता बोकाड़िया

न्यूमरोलॉजी में नंबर 8 का महत्व

भावुक, रोमांटिक और आध्यात्मिक नंबर-7 की अजीबोगरीब शख्सीयत के बाद कूल, रूखे, गहन, गंभीर और हर चैलेंज का माकूल जवाब देनेवाले नंबर-8 की तिरछी निगाहें:

किसी भी महीने 8, 17 और 26 को पैदा हुए लोगों का स्वामी ग्रह शनि होता है। शनि पाप ग्रह है। यह स्वभाव से बेहद ठंडा और रूखा होता है और इसे परिवार के विभिन्न शक्तिशाली ग्रहों में सबसे ज्यादा कुटिल ग्रह माना जाता है। इसका असर व्यक्ति पर साढ़े सात साल तक रहता है। यदि शनि अनुकूल न हो तो व्यक्ति की सेहत तो खराब होती ही है, उसे कई तरह के नुकसान उठाने पड़ते है। उसके कामों में रुकावटें आती है, देरी होती है ओर उसे सही गलत का भान नहीं रहता। अगर शनि अनुकूल हो तो वह व्यक्ति को लंबी उम्र, अधिकार, नेतृत्व, शोहरत और अच्छे बुरे की भरपूर समझ देता है।

नंबर-8 लोग खुद पर किसी तरह का अनुशासन पसंद नहीं करते। ये लोग विद्रोही और कानून के प्रति बेपरवाह होते हैं। पर ये लोग बहुत मेहनती होते हैं और चुनौतियां स्वीकार करने से पीछे नहीं हटते। ये नामुमकिन को मुमकिन बनाने की कूबत रखते हैं। ये चुप्पा, धैर्य से भरे, गहरे और गंभीर होते हैं और बाहरी तौर पर बेहद शांत नजर आते हैं। नंबर-8 लोग जुझारू, राजनीतिज्ञ और वैज्ञानिक होते हैं। अनहोनियां इन्हें लगातार नयी स्थितियों से तालमेल बिठाने में व्यस्त रखती है। यदि वे किसी लक्ष्य की पूर्ति का निश्चय कर लेते हैं तो उसे पूरा करके ही रहते है। उन्हें चाहे कितना ही विरोध सहना पड़े, अपने मार्ग से विचलित नहीं होते।

नंबर-8 अंक वाले व्यक्ति या तो जीवन में महान सफलता प्राप्त करते हैं या बुरी तरह से असफल रहते हैं। वे अपने विचार स्पष्ट व्यक्त नहीं कर सकते जिससे लोगों के मन में उनके विषय में भ्रांतिमय धारणायें बन जाती है। शनि के दोस्तों में बुध, शुक्र राहु और केतु का शुमार है लेकिन दुश्मनों में शामिल है सूर्य, चंद्र और मंगल। इन लोगों के लिए शनिवार शुभ दिन होता है। इनके ग्रे, ब्लू तथा पर्पल (जामुनी) अनुकूल रंग है। इन्हें शनिवार का व्रत और शनिदेव या कुबेर की आराधना करनी चाहिए।

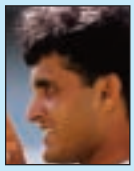

कुछ खास नंबर-8 की हस्तियां

लालकृष्ण आडवाणी	– 8 नवम्बर
सौरभ गांगुली	– 8 जुलाई
मेनका गांधी	– 26 अगस्त
डॉ. मनमोहन सिंह	– 26 सितम्बर
शिल्पा शेट्टी	– 8 जून
जॉन इब्राहिम	– 17 दिसम्बर

हादसों का अंक नंबर-8 के बारे में एक दिलचस्प तथ्य यह है कि दुनियां भर में बड़ी-बड़ी क्रांतियां, दहला देने वाले भूकम्प और आग की नदियां बहाते ज्वालामुखी का खास जुड़ाव प्राय: इसी अंक से जुड़ी तारीखों से ही है।

-मो. 09920374449
E-mail: neettakbokaria@hotmail.com

राम नाम का आसरा

शीतल संत मुरारी बापू

संत तुलसीदासजी के जीवन की घटना है। काशी में सामने तट पर कुछ समय रहे। तो रात्रि का समय था, बाबाजी राम नाम जप रहे थे। तो कुछ चोर लोग चोरी करके निकले हैं और उनके पीछे पकड़ने वाले पड़े हैं। तो गोस्वामीजी की कुटिया में जो सामान चोरी करके लाए थे वे रख दिए और कहा कि बाबा, हमको बचाओ। हम गंगा के सामने तट पहुंच जाएं, ऐसी कृपा करो। हम पकड़े जायेंगे, मारे जायेंगे।

शरणागत हुए तो संत को दया आ गई। पूछा–''आपको तैरना आता है?'' चोर बोला–''तैरना नहीं आता, चोरी करना आता है।'' तो कहा कि एक काम करो। मैं चिट्ठी लिखकर देता हूं उसको पकड़कर कूदो, तैर जाओगे। भरोसा रखना। चोर बोले कि आपकी शरण आए हैं, हमको पूरा यकीन है बाबा।

तो गोस्वामीजी ने चिट्ठी में लिख दिया कुछ और पकड़ा दी। और ये चिट्ठी लेकर भरोसे के साथ कूदे गंगा में। मां गंगा ने उनको पार कर दिया। पहुंच गए सामने तट पर। फिर सोचा कि जरा देखें, क्या लिखा है? और खोलकर देखा तो राम लिखा है, तो कहा–''ओहो! राम में इतनी ताकत! इससे तो अच्छे अक्षरों में हम लिख सकते थे।'' गोस्वामीजी के अक्षर तो इतने अच्छे नहीं। फिर सोचा कि प्रयोग करें, हम भी लिखकर जाएं।

तो उन लोगों ने अपने हाथ से राम लिखा, चिट्ठी पकड़ी और फिर कूदे। तो राम नाम ने अपना असर तो जरूर दिखाया लेकिन बाल-बाल बचे। डूबते-डूबते बचे। बड़ी मुश्किल से बाहर आए और गोस्वामीजी से पूछा कि महाराज, राज बताओ। आपने भी राम नाम लिखा था और हमने भी अच्छे ढंग से राम लिखा था लेकिन इस बार बाल-बाल बचे, क्या फर्क है?

बाबाजी ने मुसकराते हुए कह दिया–फर्क एक है कि मैंने लिखा था वह साधु का राम था और आपने लिखा वह चोर का राम था।

विश्वास के साथ जो लिख देता है, बोल देता है तो क्या नहीं होता?

कविताएं

मुलाकात एक पौधे से

सीताराम गुप्ता

महीनों से
गुमसुम
उपेक्षित–सा
गमले में गड़ा
एक पुराना गुलाब का पौधा
शायद महीनों से
नहीं खिले पफूल
मैं अनमना–सा
भिगोकर इसकी जड़ों को
और उलझी–पुलझी टहनियों को
चाहता हूँ लौटना
तो उलझा लेते हैं
मेरे कुर्ते का एक छोर
पत्तियों की ओट में दुबके काँटे
पलटता हूँ मैं
तो रह जाता हूँ उलझकर
इसकी नरम–नरम
ताँबई रंग की पत्तियों में
जो कल–परसों तक
हो जाएँगी हरी
और सहसा तभी
दीख पड़ती है मुझे
एक नन्हीं कली
इन्हीं पत्तियों के बीच
दुबकी दुलहन–सी
सिमटी–सकुचाई
पफूल बनने के
बोध से लजाई।

–ए.डी.–106–सी, पीतमपुरा
दिल्ली–110034

गज़ल

राजेन्द्र तिवारी

जज़्बों की बयानी के लिए सोचता कौन है?
अब आंख के पानी के लिए सोचता है कौन?

प्यास अपनी बुझाने में है मसरुपफ सभी लोग,
दरिया की रवानी के लिए सोचता है कौन?

बेताब नई नस्ल है पहचान को खुद की,
पुरखों की निशानी के लिए सोचता है कौन?

मिट्टी के खिलौनों पे फ़िफदा होती है दुनिया,
मिट्टी की कहानी के लिए सोचता है कौन?

सब अपने लिए करते हैं, लफ़्ज़ों की तिजारत,
लफ्ज़ों के मआनी के लिए सोचता है कौन?

–तपोवन, 38–बी, गोविंद नगर,
कानपुर–208006 (उ.प्र.)

दर्शन

सी. एल. सांखला

ऐसा रचें समाज जहां हम, सब मिल–जुल के रहा करें
देश धरा यह रहे सलामत, सब मिल करके दुआ करें।
अलग अलग क्यों रहे आज हम, नीलम छत है एक जहां
एक समंदर का जल व्यापक, एक अखंडित धरा यहां
तेजस एक वितान एक है, एक नेक है रवि–चंदा
अलग अलग बिखरा टुकड़ों में, एक नहीं क्यों यह बंदा
रूप रूप जब मिल जायें तो, एक रूप सब हुआ करें
देश–धरा यह रहे सलामत, सब मिल करके दुआ करें।
आन मान गर एक रहे तो, क्यों कर हो अपमान यहां
तान–वितान एक रस हो तो, क्यों हो खींचातान यहां
मिटे दूरियां हर एक दिल की, ऐसी कोई व्यवस्था हो
अहम–वयम के भाव एक हो, वह समरूप अवस्था हो।
रहे न कोई जहां अछूता, सबको रहमत छुआ करे
देश–धरा यह रहे सलामत, सब मिल करके दुआ करें।
एक शून्य में हुए समाहित, नाद–निनाद सभी सारे
आखिर कहां शेष रह जाते, वाद–विवाद सभी सारे
अन्तर्द्वंद्व विलय हो जाए, द्वेष–दंभ ना रहे जरा
द्वैताद्वैत करे आलिंगन, पूर्ण भाव जब रहे खरा।
विश्व विराट स्वरूप निहारें, दर्शन हम सब किया करें
देश–धरा यह रहे सलामत, सब मिल कर के दुआ करें।।

–'शब्दवन', पो.– टाकरवाड़ा
जिला–कोटा–325204 (राजस्थान)

घर

डॉ. देवेन्द्र आर्य

चाहता हूं मैं बनाना
एक ऐसा घर
जहां हंसने के लिए
दो चार कोने हों।
सुबह आकर
द्वार की सांकल किरण खोले
और आंगन भर पफुदकती
मलयनिल डोले
गुदगुदाए चांदनी मन
दिन सलोने हों
जहां हंसने के लिए
दो चार कोने हों।
एक चूल्हा, एक आंगन
एक सुख मन के
एक आंसू हो सभी का
एक दुख तन के
प्यार के त्यौहार हो
जादू न टोने हों
जहां हंसने के लिए
दो–चार कोने हों।
शाम को हारा–थका श्रम
चैन से सोए
सुबह सूरज बन
जगत के तम–कलुष धोए
उम्र हों पर साथ
बचपन के खिलौने हों
जहां हंसने के लिए
दो–चार कोने हों।
नदी तट हो, हों घरौंदे
कल्पना के घर
नीम हो, कुछ घोंसले
कुछ पक्षियों के स्वर
औ' कुलांचे मारते
कुछ हिरण छौने हों
जहां हंसने के लिए
दो–चार कोने हों।

–वाणी सदन, बी–98, सूर्यनगर
गाजियाबाद–201011 (उ.प्र.)

मधुमास को थामे हुए हैं

श्याम नारायण श्रीवास्तव 'श्याम'

दर्द जीते हैं
मगर उल्लास को थामे हुए हैं
पतझरों के
बीच भी मधुमास को थामे हुए हैं।
महफिलों से दोस्ती
घर–द्वार/से रूठे नहीं हैं
बढ़ रहे पर
जिन्दगी की/डोर से टूटे नहीं हैं।
टोपियां तो
नफरतों के बीज
बोतीं रोज पर
हम अभी भी
प्यार के अहसास को थामे हुये हैं।
बादलों जैसे
घिरे हैं
प्यास ने जब भी पुकारा,
चुक गये,
लेकिन तृषा की,
मांग को जी भर संवारा,
आंधियों ने तो
बहुत चाहा
उखड़ जायें मगर हम,
जिन्दगी के
आन्तरिक
विन्यास को थामें हुये हैं।
हम नहीं कहते
अंधेरों में
नया सूरज उगाया,
कुछ नहीं पर
जुगनुओं का
धर्म तो हमने निभाया।
तमस का विस्तार
बढ़ता जा रहा माना मगर हम
सांझ डूबी
किरन के
विश्वास को थामे हुए हैं।
लिप्त देखा जब
किसी को
नेह–नय के अपहरण में
रोकने को हम बढ़े
जितनी रही सामर्थ्य तन में
समय ने काटे
हमारे पंख
तन घायल किया पर
हम अभी भी
आंख में आकाश में थामें हुए हैं।

–988, सेक्टर–आई, एल.डी.ए. कॉलोनी
कानपुर रोड, लखनऊ–226012 (उ.प्र.)

आयुष्मन भवः

पूनम गुजरानी

मां की ममता
पिता का पुरुषार्थ
जब मिलता है
नवजात शिशु को
तब–
अस्थि मज्जा में
उतर आती है जिजीविषा
संतति में
पनपता है प्यार
सृष्टि करती है शृंगार
धरती सोती है चैन की नींद
आकाश अपना वरदहस्त उठाकर कहता है
आयुष्मान भवः।

–9–ए, मेघ सरमन अपार्टमेंट–1
तेरापंथ भवन रोड, सिटी लाइट, सूरत

लक्ष्य की ओर चल

नरेश कुमार 'उदास'

लक्ष्य की ओर निरंतर चल
पानी बहता है कल–कल
तेरे इरादे हैं तेरा बल
मिलेगा तुझे अवश्य मेहनत का फल।

नहीं कभी भी किसी को छल
हमेशा सीधे रास्ते चल
मुसीबतों में तपकर निकल
गिर–गिर कर संभल।

न मन को कर अति विकल
इरादे तेरे बस रहें अटल
अवश्य आएगा सुनहरा कल
निरन्तर लक्ष्य की ओर चल।

–हिमालय जैव संपदा प्रौद्योगिकी
संस्थान, पालमपुर–176061
(हिमाचल प्रदेश)

सैलानी आ रहे हैं

श्रीरंग

सैलानी आ रहे हैं
गले में कैमरा लटकाये
आंखों पर चश्मा चढ़ाये
पीठ पर लगेज लादे
बरमुदा और टी–शर्ट पहने
लम्बे कद काठी वाले
गोर चिट्टे
पश्चिमी देशों से...
सैलानी
लगातार क्लिक कर रहे हैं कमरे
खींच रहे हैं तस्वीर
गंगा में नहाती
देह छुपाती
स्त्रियों की...
सैलानी
घूम रहे हैं
जंगलों में
ले रहे हैं अर्धनग्न आदिवासी स्त्रियों के
चित्र...
सैलानी
बना रहे हैं वीडियो फिल्म
गरीबी भुखमरी
जादू–टोना, टोटकों में जीती संस्कृति पर
धर्मान्धता पर
सैलानी
चख रहे हैं
धूल धूसरित नग्नता का स्वाद
प्रसाधनों से लिपी पुती नग्नता से ऊब कर
बदल रहे हैं जायका...
सैलानी आ रहे हैं
मजेदार यात्रा का लुत्पफ उठाने
अपना मन बहलाने
बिताने देशी नययौवनाओं के साथ रात...
सैलानी आ रहे हैं
बहुरंगे भूखण्ड का चप्पा चप्पा छानने
सूंघने काली लाल दोमट मिट्टी की गंध
बटोर रहे हैं
विविधवर्णी धूसर सौन्दर्य...
सैलानी आ रहे हैं
विभिन्न कोणों से
भारत से उस मानचित्रा की तस्वीर खींचने
जो 'अक्षय यौना ति' है
उनके पुरखों के मुताबिक...
सैलानी आ रहे हैं
दिखा रहे अपने नेटवर्क पर
तिलक, माला, मदारी
और भिखारियों की तस्वीर...
सैलानी आ रहे हैं
सैलानी अतिथि हैं
अतिथि देवता...।

–128–एम/1–आर, कुशवाहा मार्केट
भोला का पूरा, प्रीतम नगर, इलाहाबाद (उ.प्र.)

सच की रोशनी

डॉ. निजामउद्दीन

कश्मीर के आध्यात्मिक संत शेख़ नूरुद्दीन ऋषि (1376-1438) को स्तनपान कराने की उत्प्रेरक थी। महायोगिनी शिव-भक्त और कश्मीरी भाषा की प्रथम कवयित्री लल्लेश्वरी, उन्हें 'लल आरिफ़ा' व 'ललद्यद' भी कहा जाता है। उस महान कवयित्री की तुलना हम मीराबाई और महोदवी वर्मा से कर सकते हैं। मीराबाई ने जिस प्रकार कृष्ण-प्रेम में मग्न होकर राजकाज की मान-मर्यादा को तिलांजलि दे दी थी और कृष्ण के प्रेम में दीवानावार जंगल-जंगल घूमती थीं, वैसे ही ललद्यद ने शिव-भक्ति में आकण्ठ डूब कर ससुराल का परित्याग कर अर्धनग्नावस्था में रात-दिन इधर-उधर घूमना शुरू कर दिया। कश्मीर में उनके वाखों को बड़े आदर से हिन्दू-मुसलमान पढ़ते हैं, गायन करते हैं। उस योगिनी के लिए कश्मीर घाटी का कण-कण शिवमय था- 'शिव छुय थलि थलि रोज़ान'। उसने कहा है कि गुरु ने मुझे मंत्र दिया कि बाहर से अंदर चली जा, बस फिर क्या था- गुरु मंत्र बन गया। उनके वाखों में जो रहस्यात्मकता और आत्मसमर्पण है, वैसा ही हमें महादेवी वर्मा में नज़र आता है। 'मधुर-मधुर मेरे दीपक जल' या 'मैं नीर भरी दुख की बदली' जैसे गीत महादेवी वर्मा की निर्गुण भक्ति की सन्निष्ठा को दर्शाते हैं। शेख़ नूरुद्दीन, जिन्हें नुंदऋषि भी कहा जाता है, ने लल्लेश्वरी को अवतार का दर्जा तक दे दिया-

वह लल्लेश्वरी पद्मपुर की, उसने तो-
निश्चय ही से अमृत का घूंट पिया था
वह महायोगिनी तो अवतार अरे थीं
हे देव! बनूं मैं भी वैसा ही- वर दो!

'ललद्यद' नाम से श्रीनगर में एक सौ बिस्तरों वाला महिला अस्पताल भी है, यह उस महान योगिनी के प्रति लोगों के आदर-सम्मान का प्रतीक है। उनके वाखों में जीवन के विविध रूपों का चित्रांकन है और उनका प्रमुख स्वर या मूल भावना भक्ति व नैतिक आचरण है। मानव की प्रगति में जब तक नैतिकता का समावेश न होगा, वह भ्रष्टाचार मुक्त नहीं हो सकती। आज हमारे जीवन से सत्य-निष्ठा समाप्त हो रही है। 'सांच बराबर तप नहीं' कहते ज़रूर हैं, पर तद्नुसार आचरण नहीं करते। सच बोलने की हमारे अंदर हिम्मत नहीं, हमारी ज़बान कांपने लगती है और झूठ मज़ा ले-लेकर बोलते हैं। बस माया और शैतान के कदमों पर चलते हैं। सच को 'हक' कहा गया है, गांधीजी ने भी सच को ईश्वर माना है। जैनधर्म में पांच अणुव्रतों में 'सत्य' को प्रथम रखा गया है लेकिन उस महामणि को हमने प्रथम श्रेणी से पदच्युत कर रसातल में पहुंचा दिया है। जहां से रोशनी मिलती है उसी को मूलोच्छेदन कर डाला, कैसा हीन-नीच हो गया है यह प्राणी! समझ लीजिए जो कुछ भी सुव्यवस्था समाज में शेष है वह सत्य के बल पर ही है। एक बार दो व्यक्ति अपनी बात कहते हुए रोशनी, तीर्थ, भाई, सुख की चर्चा कर रहे, दो व्यक्तियों के स्वर ये हैं-

(पहला)
सूरज-सी रोशनी नहीं,
तीर्थ नहीं है गंगा जैसा
भाई जैसा कोई नाता नहीं,
सुख नहीं को पत्नी जैसा
(दूसरा)
आंखों-सी रोशनी नहीं कोई
तीर्थ नहीं है टांगों जैसा
नाता नहीं जेब-सा कोई
चादर-सा सुख कौन भला
यह सुनकर ललद्यद कह उठी-
सच की है पहचान रोशनी
सच्चा प्यार ही सच्चा तीर्थ
सच का नाता असली नाता
डरना उस से सुख का कारण।

-मोहल्ला साजगारीपोरा,
श्रीनगर-190011 (कश्मीर)

गृहस्थ जीवन के कुछ योगायोग

- यदि लग्नेश और सप्तमेश इकट्ठे होकर पंचम भाव अथवा 12वें भाव से संबंध रखें तो प्रेम विवाह होता है।
- सप्त भाव का स्वामी पंचम भाव में हो और पंचम भाव का स्वामी सप्तम भाव में हो तो प्रेम विवाह होता है।
- यदि लग्नेश पंचम भाव से ताल्लुक रखता है और सप्तमेश लाभ स्थान में हो तो जातक प्रेम करता है, पर विवाह विधिवत सर्वसम्मति से करता है।
- यदि लग्नेश और सप्तमेश दोनों लाभ स्थान पर हों और शुक्र पर उनकी पूर्व दृष्टि पड़ रही हो तो भी प्रेम विवाह संभावित है।
- शुक्र बारहवें हो, उसका संबंध किसी न किसी रूप से सातवें भाव में हो तो व्यक्ति प्रेम विवाह करता है। यदि लग्नेश पंचम भाव में हो, सप्तमेश लाभ स्थान में हो तो जातक एक के बाद एक लड़की से संबंध जोड़ता है।
- शुक्र और बुध की युति हो तो प्रेम विवाह की गुंजाइश बढ़ जाती है।
- यदि लग्नेश सप्तमेश और भाग्येश 12वें हो तो व्यक्ति का प्रेम विवाह होता है और भाग्योदय विवाह के पश्चात ही होता है।
- यदि बारहवें भाव चर राशि का हो, सप्तमेश बारहवें भाव में हो, लग्नेश का संबंध भी बारहवें भाव से हो तो व्यक्ति का विवाह विदेश में प्रेम-विवाह के रूप में होता है।
- यदि लग्नेश और सप्तमेश का संबंध पंचम भाव में हो तो व्यक्ति का मोह और पागलपन प्रेमिका के बीच में फंसा रहता है।

-पं. गिरीश कौशिक

ज्ञान

आचार्य महाश्रमण

दु:ख का मूल

संसार (जीव जगत्) की विचित्रता का आधार व कारण कर्म है। कर्म का कारण आश्रव है। इसलिए संसार की विचित्रता का मूल आधर आश्रव है। मिथ्यात्व आदि चार आश्रव और अशुभ योग आश्रव तो दु:ख–हेतु हैं ही। शुभयोग आश्रव को सीधा दु:ख हेतु नहीं कहा जा सकता, किंतु जब तक वह रहता है, पूर्ण दु:ख–मुक्ति नहीं हो सकती। शुभयोग से अशुभ कर्म निर्जरण तथा शुभकर्म आश्रवण–ये दो कार्य होते हैं। निर्जरण अपने आप में सुख है, सुख का मार्ग है।

संसार में दु:ख है–यह एक प्रत्यक्ष सच्चाई है। दु:ख का कारण भी दिखाई देता है। दु:खमुक्ति भी संभव मानी गई है और दु:खमुक्ति का मार्ग भी है। दु:ख, दु:ख-हेतु, दु:खमुक्ति और दु:खमुक्ति-हेतु–ये चार सच्चाइयां हैं। नव तत्त्वों में इन चारों सच्चाइयों को खोजें तो इस प्रकार उत्तर मिलता है–पाप तत्त्व दु:ख है। आश्रव उसका हेतु है। मोक्ष दु:खमुक्ति है। संवर दु:खमुक्ति का मूल मार्ग है। जैन दर्शन का सार इस रूप में प्रतिपादित है–''आश्रव संसार-भ्रमण का हेतु है और संवर संसार-मुक्ति का। यही आर्हत (जैन) दर्शन है। शेष जो कुछ है इसी का विस्तार है।''

नव तत्त्वों में पांचवां तत्त्व है आश्रव। इसे आश्रवद्वार भी कहा जाता है। पुण्य-ताप का कारण आश्रव है। जैसे मकान में प्रवेश के लिए द्वार, कुण्ड के नाला और नौका के छिद्र होता है, वैसे ही कर्म के जाने (आत्मा के चिपकने) का रास्ता आश्रव होता है। आश्रव के पांच प्रकार हैं–मिथ्यात्व, अव्रत, प्रमाद, कषाय और योग। 'शान्तसुधारस भावना' में प्रमाद की पृथक् विवक्षा के अभाव में आश्रव चार ही बतलाए गए हैं- मिथ्यात्वाविरति कषाययोगसंज्ञाश्चत्वार: सुकृतिभिराश्रवा: प्रदिष्टा:। विस्तार की विवक्षा में आश्रव के बीस भेद भी हो जाते हैं। यह विस्तार योग आश्रव के भेदों से हुआ है। अति संक्षेप में जाएं तो, मुझे लगता है, आश्रव दो ही रह जाएंगे–कषाय और योग। कर्म-बंधन के दो ही कारण है। कषाय और योग। मिथ्यात्व, अव्रत और प्रमाद–ये तीनों कषाय की ही विभिन्न अवस्थाएं हैं। प्रथम और तृतीय गुणस्थान में मिथ्यात्व आदि पांच आश्रव, दूसरे वे चौथे गुणस्थान में अव्रत आदि चार आश्रव, पांचवे गुणस्थान में अपूर्ण अव्रत तथा प्रमाद आदि तीन आश्रव, छट्ठे गुणस्थान में प्रमाद आदि तीन आश्रव, सातवें से दसवें गुणस्थन तक कषाय और शुभ योग आश्रव, ग्यारहवें से तेरहवें गुणस्थान तक मात्र शुभ योग आश्रव होता है। चौदहवां गुणस्थन अनाश्रव होता है, अबन्ध होता है। छट्ठे गुणस्थान में अशुभ योग आश्रव भी हो सकता है। यद्यपि मुनित्व की भूमिका में अशुभ (सावद्य) योग वर्जनीय है, किन्तु मोहवश हो भी सकता है। ग्यारहवें गुणस्थान में मोह (कषाय) की विद्यमानता रहती है परन्तु वह सर्वथा उपशांत रहता है। वह वहां न विपाकोदय में और न ही प्रदेशोदय में रहता है, इसलिए कर्म का आश्रवण उससे हो नहीं सकता।

संसार (जीव जगत्) की विचित्रता का आधार व कारण कर्म है। कर्म का कारण आश्रव है। इसलिए संसार की विचित्रता का मूल आधर आश्रव है। मिथ्यात्व आदि चार आश्रव और अशुभ योग आश्रव तो दु:ख-हेतु हैं ही। शुभयोग आश्रव को सीधा दु:खहेतु नहीं कहा जा सकता, किंतु जब तक वह रहता है, पूर्ण दु:ख-मुक्ति नहीं हो सकती। शुभयोग से अशुभ कर्म निर्जरण तथा शुभकर्म आश्रवण–ये दो कार्य होते हैं। निर्जरण अपने आप में सुख है, सुख का मार्ग है।

विशुद्ध (केवल) योग में बंधन की दीर्घकालिकता व अनुभागतीव्रता की क्षमता नहीं होती। उसके साथ परिणाम जुड़ता है, उसके आधार पर निष्पत्ति आती है। एक समान क्रिया की, दृष्टिकोण और परिणाम की भिन्नता के कारण, निष्पत्ति भिन्न-भिन्न प्रकार की हो जाती है। दो व्यक्ति ध्यानस्थ बैठे हैं। बाहर से दोनों समान अनुष्ठान में संलग्न हैं, परन्तु एक मोक्ष की दिशा में आगे बढ़ रहा है और एक बंधन की दिशा में। एक के मन में कर्मनिर्जरा का भाव है, दूसरे के मन में दिखावे की भावना है।

दो व्यक्तियों साधुओं के स्थान पर एक साथ जा रहे हैं। गतिक्रिया दोनों का समान है। एक संयमयुक्त चल रहा है, उसका उद्देश्य है साधुओं का प्रवचन-श्रवण। दूसरा असंयम से चल रहा है, उसका उद्देश्य है साधुओं के स्थान पर आने वाले दर्शनार्थियों के जूतों का चुराना। अब तक पहले ने प्रवचन नहीं सुना है, दूसरे ने जूतों को चुराया नहीं है। दोनों चल रहे हैं। फिर भी एक कर्मनिर्जरा कर रहा है और दूसरा पापकर्मबंधन कर रहा है। एक ही व्यक्ति एक ही क्रिया में स्थित है, किन्तु परिणामों की भिन्नता के कारण कभी वह पाप कर्म बांध लेता है और कभी कर्मों को क्षीण कर देता है।

राजर्षि प्रसन्नचन्द्र साधना में लीन थे। परन्तु भावों से युद्धस्थल में पहुंच गए, हिंसा के संस्कार सक्रिय हो गए, वे नरक में जाने के योग्य बन गये। परिणामों की दिशा बदली, हिंसा में अहिंसा व संयम के भावों में स्थित हुए, वहीं उन्हें केवलज्ञान प्राप्त हो गया। शरीर से साधना में स्थित थे। परन्तु परिणाम की भिन्नता ने भिन्न-भिन्न निष्पत्ति ला दी। दृष्टिकोण का मिथ्यात्व और दूषित परिणाम व्यक्ति को भटकाते हैं।

आश्रव को कर्मकर्त्ता माना गया है। नव तत्त्वों में एक आश्रव तत्त्व ही कर्मों का कर्त्ता है। कर्मों का कर्त्ता छह द्रव्यों में जीव और नव तत्त्वों में जीव तथा आश्रव माना गया है। यहां जीव को कर्मकर्त्ता के रूप में स्वीकार किया गया है, वह जीव का आश्रवात्मक परिणाम ही है, उससे भिन्न और कुछ नहीं है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि आश्रव ही कर्मकर्त्ता है। कर्म का अकर्त्ता छह द्रव्यों में कौन और नौ तत्त्वों में कौन? इस प्रश्न का उत्तर दिया गया है। कर्म का अकर्त्ता छह द्रव्यों में छहों तथा नौ तत्त्वों में आठ तत्त्व आश्रव को छोड़कर।

आचार्य भिक्षु ने 'तेरहद्वार' में आश्रव और कर्म की भिन्नता को स्पष्ट किया है। कर्म आगंतुक है और आश्रव आगमन-मार्ग है। मकान का द्वार अलग है और आगन्तुक मनुष्य अलग है। ठीक इसी प्रकार कर्म अलग है और आश्रव अलग है।

एक व्यक्ति जीव-हिंसा करता है उसके पाप कर्म का बंधन होता है यहां तीन तथ्य हैं। जिस कर्म के उदय से व्यक्ति जीव-हिंसा में प्रवृत्त होता है, उस कारणभूत कर्म को 'प्राणातिपातपापस्थान' कहा जाता है। जीव को मारता है, वह मारना प्राणातिपात क्रिया है, प्राणातिपात आश्रव है, उससे जो पाप कर्म का बंध होता है, वह प्राणातिपात पाप-बंध है।

साधना का विकास-क्रम है आश्रव से अनाश्रव की दिशा में प्रस्थान। ज्यों-ज्यों व्यक्ति बनता है, त्यों-त्यों वह दु:ख के मूल को खत्म कर डालता है। ■

काल-प्रभाव

वृजेन्द्र नंदन दास

कार्तिक मास में भक्ति करना श्रेष्ठ

भगवान ऋषभदेव के प्रथम पुत्र महाराजा भरत के नाम से प्रसिद्ध हमारे इस 'भारतवर्ष' में हर 'मास' अपना महत्व रखता है लेकिन 'कार्तिक मास' भक्ति के लिए सर्वोत्तम माना गया है। इस मास को दामोदर मास भी कहा जाता है। भारतवर्ष उत्सव प्रधान देश भी है। इन सर्वाधिक महत्वपूर्ण उत्सवों में एक उत्सव है ऊर्जव्रत। यह कार्तिक अक्टूबर-नवम्बर मास में मनाया जाता है। वृंदावन में दामोदर रूप में भगवान कृष्ण के अर्चा विग्रह की पूजा करके इस उत्सव को मनाया जाता है। दाम का अर्थ है 'रस्सी' और उदर का अर्थ है 'पेट'। माता यशोदा ने नटखट कान्हा से तंग आकर उनके उदर के चारों ओर रस्सी बांध दिया था, इसलिए उनका नाम दामोदर पड़ा। कहा जाता है कि जिस प्रकार भगवान दामोदर अपने भक्तों को अत्यंत प्रिय है उसी प्रकार दामोदार मास अर्थात कार्तिक मास भी उन्हें अत्यंत प्रिय है। कार्तिक मास में दामोदर से इस तरह प्रार्थना की जाती है- ''हे प्रभु! आप सबों के स्वामी एवं समस्त वरों के दाता है।''

आज भी अनेक भक्त कार्तिक मास में ऊर्जव्रत के समय भक्ति करने के उद्देश्य से मथुरा या वृंदावन जाकर ठहरते है। वृंदावन यह दिव्य स्थान है जहां कृष्ण बालकरूप में अपनी नित्य लीलाएं करते हैं और यह सारी सृष्टि में सर्वोच्च क्षेत्र माना जाता है। जब यह वृंदावन भौतिक जगत में प्रकट होता है तो यह स्थान गोकुल कहलाता है और वे वैकुण्ठ जगत में यही गोलोक या गोलोक वृंदावन धाम कहलाता है।

पद्मम पुराण में कहा गया है '' भगवान भक्त को मुक्ति या भौतिक सुख तो दे सकता है किन्तु भक्तगण कार्तिक मास में मथुरा-वृंदावन में रहकर कुछ भक्ति कर लेने पर ही भगवान की शुद्धभक्ति प्राप्त करना चाहते हैं।'' तात्पर्य यह है कि भगवान उन सामान्य व्यक्तियों को भक्ति नहीं प्रदान करते, जो भक्ति के विषय में निष्ठावान नहीं है। ऐसे निष्ठा रहित व्यक्ति भी यदि कार्तिकमास में विशेषकर मथुरा मंडल में रहकर विधिपूर्वक भक्ति करते हैं, तो उन्हें भगवान की व्यक्तिगत सेवा प्राप्त होती है।

कार्तिक मास में सुबह-शाम श्रीकृष्ण के मंदिरों में दामोदराष्टकम का विधिवत पाठ किया जाता है और साथ-साथ पर दीपदान भी किया जाता है। कार्तिक माह में भगवान दामोदर की पूजा प्रार्थना का विशेष महत्व है, करनी चाहिए तथा प्रतिदिन दामोदराष्टक प्रार्थना गानी चाहिए, जिसे सत्यव्रत मुनि ने बताया है और जिससे भगवान दामोदर आकर्षित होते हैं। इस प्रार्थना का भाव्यार्थ है-

● जिनका सर्वेश्वर सच्चिदानंद स्वरूप है, जिनके कपोलों पर मकराकृत कुंडल हिलडुल रहे हैं, जो गोकुल नामक दिव्य धाम में परम शोभायमान हैं, जो (दधिभाण्ड फोड़ने के कारण) मां यशोदा के डर से ऊखल से दौड़ रहे हैं किन्तु जिन्हें मां यशोदा ने उनसे भी अधिक वेगपूर्वक दौड़कर पकड़ लिया है- ऐसे भगवान दामोदर को मैं अपना विनम्र प्रणाम अर्पित करता हूं।

● (मां के हाथ में लाठिया देखकर) वे रोते-रोते बारम्बार अपनी आंखों को अपने दोनों हस्तकमलों से मसल रहे हैं। उनके नेत्र भय से विह्वल हैं, रूदन के आवेग से सिसकियां लेने के कारण उनके त्रिरेखायुक्त कंठ में पड़ी हुई मोतियों का, जिनका उदर रस्सियों से नहीं अपितु यशोदा मां के वात्सल्य-प्रेम से बंधा है, मैं प्रणाम करता हूं।

● जो ऐसी बाल-लीलाओं के द्वारा गोकुलवासियों को आनंद-सरोवरों में डुबोते रहते हैं और अपने ऐश्वर्य-ज्ञान में मग्न अपने भक्तों के प्रति यह तथ्य प्रकाशित करते हैं कि उन्हें भय-आदर की धारणाओं से मुक्त अंतरंग प्रेमी भक्तों द्वारा ही जीता जा सकता है, उन भगवान दामोदर को मैं कोटि-कोटि प्रणाम करता हूं।

● हे प्रभु! यद्यपि आप हर प्रकार के वर देने में समर्थ हैं, तथापि मैं आपसे न तो मोक्ष अथवा मोक्ष के चरम सीमारूप वैकुण्ठ में शाश्वत जीवन और न ही (नवधा भक्ति द्वारा प्राप्त) कोई अन्य वरदान मांगता हूं। हे नाथ! मेरी तो बस इतनी ही इच्छा है कि आपका यह वृंदावन का बाल-गोपाल रूप मेरे हृदय में सदा प्रकाशित रहे, क्योंकि इसके सिवा मुझे किसी अन्य वरदान से प्रयोजन ही क्या है?

● हे प्रभु! लालिमायुक्त कोमल श्यामवर्ण के घुंघराले बालों से घिरा हुआ आपका मुखकमल मां यशोदा के द्वारा बारंबार चुम्बित हो रहा है और आपके होठ बिम्बफल की भांति लाल हैं। आपके मुखमंडल का यह सुंदर दृश्य मेरे हृदय में सदा विराजित रहे। मुझे लाखों प्रकार के दूसरे लाभों की कोई आवश्यकता नहीं।

● हे भगवान, मैं आपको प्रणाम करता हूं। मैं आपको प्रणाम करता हूं। हे दामोदर, हे अनंत, हे विष्णु, हे नाथ, मेरे प्रभु, मुझ पर प्रसन्न हो जाइए! मैं दुखों के सागर में डूबा जा रहा हूं। मेरे ऊपर अपनी कृपादृष्टि की वर्षा करके मुझे दीन-हीन शरणागत का उद्धार कीजिए और मेरे नेत्रों के समझ प्रकट हो जाइए।

● हे भगवान दामोदर, जिस प्रकार आपने दामोदर रूप से नलकूबर मणिग्रीव नामक कुबेरपुत्रों को नारदजी के शाप से मुक्तकर उन्हें अपना महान भक्त बना लिया था, उसी प्रकार मुझे भी आप अपने प्रेमभक्ति कर दीजिए। यही मेरा एकमात्र आग्रह है, मुझे किसी भी प्रकार के मोक्ष की कोई इच्छा नहीं है।

● हे भगवान दामोदर, मैं सर्वप्रथम आपके उदर को बांधने वाली दीप्तिमान रस्सी को प्रणाम करता हूं। आपकी प्रियतमा श्रीमती राधारानी के चरणों में मेरा सादर प्रणाम है और अनंत लीलाएं करने वाले आप परमेश्वर को मेरा प्रणाम है।

-राष्ट्रीय संपर्क निदेशक
इस्कॉन, नई दिल्ली

समाधान

मंजुला जैन

गौरवपूर्ण और सर्वश्रेष्ठ पद है 'माँ'

मातृदेवो भवः कहकर भारतभूमि के जर्रे-जर्रे में गुरु, अतिथि आदि की तरह माँ को भी देवरूप में प्रतिष्ठित किया गया है। महर्षि वाल्मीकी ने तो उसकी महिमा को इन शब्दों में व्यक्त किया है- 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी'। वैदिक परंपरा दुर्गा, सरस्वती, लक्ष्मी के रूप में, बौद्ध अनुयायी चिरंतन शक्ति प्रज्ञा के रूप में और जैन धर्म में श्रुतदेवी और शासनदेवी के रूप में माँ की आराधना होती है। लोक मान्यता के अनुसार मातृ वंदना से व्यक्ति को आयु, यश, स्वर्ग, कीर्ति, पुण्य, बल, लक्ष्मी पशुधन, सुख, धन धान्य आदि प्राप्त होता है।

वस्तुतः दुनिया में सर्वाधिक गौरवपूर्ण और सर्वश्रेष्ठ पद है 'माँ'। प्रश्न उपस्थित होगा कि 'माँ' को यह महत्त्वपूर्ण पद और संबोधन क्यों मिला? कारण की मीमांसा करते हुए अनुभवविदों ने बताया–हमारी भारतीय परंपरा में भारतमाता, राजमाता, गौमाता की तरह धरती को भी माता कहा जाता है। वह इसलिए कि धरती पैदा करती है। वह निर्मात्री है, सृष्टा है, संरक्षण देती है, पोषण करती है, बीज को विस्तार देती है, अनाम उत्सर्ग करती है, समर्पण का सितार बजाती है, आश्रम देती है, ममता के आंचल में सबको समेट लेती है और सब कुछ चुपचाप सह लेती है। इसीलिए उसे 'माता' का गौरवपूर्ण पद मिला।

वस्तुतः माँ की ममता का कोई ओर–छोर नहीं है। उसकी ममता का दरिया किस तरह बहता है। मदर टेरेसा आदि माताओं से जीवन–पोथी के अनेकानेक अध्याय सृजित हुए हैं। किंतु वर्तमान परिवेश को देखते हुए यह सवाल अवश्य खड़ा होता है कि क्या आज की माँ जननी की भूमिका का सम्यक् निर्वहन कर रही है?

वस्तुतः माँ की ममता का कोई ओर-छोर नहीं है। उसकी ममता का दरिया किस तरह बहता है। मदर टेरेसा आदि माताओं से जीवन-पोथी के अनेकानेक अध्याय सृजित हुए हैं। किंतु वर्तमान परिवेश को देखते हुए यह सवाल अवश्य खड़ा होता है कि क्या आज की माँ जननी की भूमिका का सम्यक् निर्वहन कर रही है? अथवा क्या वे समाजशास्त्रियों के इस अभिमत पर प्रश्नचिह्न नहीं लगा रही कि बच्चा नागरिकता का पहला पाठ माँ की वात्सल्यमयी गोद में सीखता है। जबकि वस्तुस्थिति तो यह है कि माँ की गोद उसे नसीब होती कहाँ है? कुक्षि से बाहर आते ही उसे अलग पालने में सुला दिया जाता है। सोता है तो दूध की बोतल उसके मुंह से लगा दी जाती है। उसका लालन-पालन या देखरेख नर्स या आया के द्वारा होती है अथवा डे केयर सेंटर, बेबी केयर सेंटर में भेजकर कर्त्तव्यपूर्णता का लेबल लगा दिया जाता है। दो-ढ़ाई वर्ष का होते ही नर्सरी में कम्प्यूटर द्वारा उसे अक्षर-बोध प्राप्त होता है। कुछ बड़ा होते ही उसे होस्टल में प्रविष्टि दिला दी जाती है। कितनी आधुनिक माताएं तो ऐसी हैं जिन्हें अपने बच्चों से संवाद स्थापित करने का क्षण भी उपलब्ध नहीं होता। करें भी कैसे ? उन्हें अपने निजी कार्यक्रमों से ही फुर्सत नहीं है। तब भला वह कैसे उन्हें बात-बात में तत्त्वबोध दें? कब मीठी-मीठी प्रेरक लोरियां सुनाकर संस्कारों की सौगात सौंपे? किस माध्यम से पारिवारिक, सामाजिक मान-मर्यादाओं की अवगति दें? कैसे जीवन में धर्म की उपयोगिता का अहसास करवाएं? तब फिर शून्यता के सिवा शेष हाथ भी क्या आएगा?

दायित्व की इस चादर को न ओढ़ने के कारण ही आजकल के बच्चे संस्कारहीन हैं। आखिर क्यों बच्चे को जन्म देना ही मातृत्व की इतिश्री होता जा रहा है। जननी एक ऐसे घर का निर्माण करे जिसमें प्यार की छत हो, विश्वास की दीवारें हों, सहयोग के दरवाजे हों, अनुशासन की खिड़कियां हों और समता की फुलवारी हो तथा उसका पवित्र आंचल सबके लिए स्नेह, सुरक्षा, सुविधा, स्वतंत्रता, सुख और शांति का आश्रय स्थल बने। एक माँ का यह परम दायित्व है कि वह केवल जन्मदायिनी ही नहीं, जीवन-निर्मात्री भी बने। इसके लिए आवश्यक है कि वह बच्चे की दैनिक-चर्या और जीवन-चर्या पर पूरी चौकसी रखें।

बच्चा कब उठता है और कब सोता है? क्या खाता है और कब खाता है? उसकी अभिरुचि क्या है? उसके संगी-साथी कौन हैं? अपनी पुस्तकों, कपड़ों, खिलौनों और जूतों को वह कैसे रखता है? उसके स्कूल जाने और लौटने का समय निश्चित है या नहीं? स्कूल के नाम पर निरुद्देश्य तो नहीं भटकता? आवारागर्दी तो नहीं करता? हमजोलियों के साथ उसका व्यवहार कैसा है? मन में बड़े-बुजुर्गों के प्रति आदर-सम्मान के भाव हैं या नहीं? झूठ बोलने, चोरी करने, छीनाझपटी करने की आदत तो नहीं है? मादक एवं नशीली वस्तुओं की गिरफ्त में तो नहीं है? सहन करने की क्षमता है या नहीं? दूसरों के दुःख को देखकर उसका हृदय पसीजता है या नहीं? दीन-हीन और असहाय के प्रति सहयोग का भाव मन में हिलौरे लेता है या नहीं? अपना हाथ जगन्नाथ का विचार अंगड़ाई लेता है या नहीं? सुबह उठते और रात को सोते समय इष्ट स्मरण करता है या नहीं? संत दर्शन एवं धार्मिक उपासना के प्रति आकर्षण है या नहीं

ऐसी स्थिति में माँ का परम दायित्व है कि वह बच्चे की सही ढंग से परवरिश करे जो सृष्टि की पहली ईंट है तथा जिसकी किलकारियों में छिप उल्लास को व्यक्त करने में दुनिया की सभी वर्णमालाएं और लिपियां बौनी साबित होती हैं, उसके शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और भावनात्मक विकास के लिए सचेत बनें। अपना कैरियर बनाने की चिंता के साथ-साथ बच्चे को इंसानियत के सांचे में ढालें। वरना माँ की ओर से बरती गई उपेक्षा का यह दंश कहीं उसके पूरे जीवन को मटियामेट न कर दे। अथवा उन्हें अंधेरी अनैतिक, खोह में न ढकेल दे। ऐसी ही कुछ अन्य बातें, जो जीवन की धरती पर हरीतिमा फैलाती है, कुछ होने, कुछ बनने और कुछ करने की उदग्र प्यास जगाती है, बच्चे में संक्रांत करने की अत्यंत अपेक्षा है।

पाथेय

आचार्य विजय नित्यानंद सूरि

मन को खाली रखो

घर में पीने के पानी का घड़ा रहता है, उसका पानी रोज बदला जाता है। हर सुबह आप घड़े का पुराना बासी पानी फेंककर ताजा पानी भरते हैं। ऐसा तो नहीं करते कि बासी पानी बचा पड़ा है और उसी में दूसरा ताजा पानी भर लिया। आप हर रोज घड़ा साफ करके, खाली करके ताजा पानी भरकर पीना चाहते हैं, तो फिर मन के घड़े में जो पुराना बासी पानी पड़ा है, उसे पहले फेंक दो, मन का घड़ा पहले साफ करो, खाली करो, पूर्वाग्रहों का, गलत धारणाओं का, पुरानी झूठी मान्यताओं का बासी पानी फेंककर साफ स्वच्छ विचारों का ताजा पानी भरकर देखो।

प्रमोद भावना मन के घड़े को खाली करके उसमें स्वच्छ पानी भरने की कला हमें सिखाती है। दूसरों के प्रति देखने का नजरिया साफ रखो। मन-मस्तिष्क की खिड़की खुली रखो, सत्य को सत्य समझने की, गुण को गुण समझने की कला सीखो, यही तो हमारी सम्यग् दृष्टि है।

सम्यक्त्व क्या है? सत्य को सत्य समझना, धर्म को धर्म समझना। असत्य और सत्य का विवेक तभी आता है जब गुण-दृष्टि जाग्रत होती है। प्रमोद भावना का निरन्तर अभ्यास करने वाला गुणों का परीक्षक बन जाता है। उसकी अन्तर वृत्तियां शुद्ध और पारदर्शी हो जाती हैं। पानी के तल में छिपी वस्तुएं उसे साफ दिखाई देती हैं। उसकी नजर पर चश्मा साफ और स्वच्छ रहता है।

सम्यक्त्व क्या है? सत्य को सत्य समझना, धर्म को धर्म समझना। असत्य और सत्य का विवेक तभी आता है जब गुण-दृष्टि जाग्रत होती है।

सामने बैठे एक सज्जन के पास कैमरा है, कैमरा क्या करता है? दूसरों का फोटू खींचता है। आप अपने कैमरे से खुद अपनी फोटू नहीं खींच सकते। केवल दूसरे की फोटू खींच सकते हैं। सामने वाला जैसा है, वैसा ही फोटू आपके कैमरे के लैंस में झलकेगा और रील पर आ जायेगा। काले आदमी का काला रूप और नाटे का नाटा ही कद आपकी फोटू में आयेगा।

दूसरे एक सज्जन के हाथ में एक दूरबीन है। दूरबीन क्या करती है? दूर की चीजों को दिखाती है। दूर की, बहुत दूरी की चीजें आसमान के सितारे भी दूरबीन से दिखाई दे सकते हैं, छोटी-सी चीज को बड़ी बनाकर दिखाती है। दूर की चीज को नजदीक लाकर दिखाती है।

जीवन में कैमरा भी काम का है और दूरबीन भी। दूसरों के गुण देखने के लिए अपनी नजर को दूरबीन बना लो। किसी में कुछ भी गुण हैं, छोटे से छोटा गुण है तो उसको बड़ा करके देखो। परगुण-परमाणून् पर्वतीकृत्य नित्यं-दूसरों के छोटे परमाणु जितने से गुण को भी पर्वत समान बड़ा करके देखो और देखकर प्रसन्न बनो।

दूसरों के उज्ज्वल चरित्र को अपने मन की रील पर उतारने के लिए, दूसरों की खूबसूरत जिन्दगी को देखने के लिए अपनी दृष्टि को कैमरा बना लो और दूरबीन भी बना लो। परन्तु आज इससे उल्टा हो रहा है। हम अपने कैमरे से दूसरों के दुराचार के फोटू उतार रहे हैं। अपनी दूरबीन से उनकी बुराइयों को ही देख रहे हैं और यही हमारे जीवन की सबसे बड़ी त्रासदी है। उलझन है, समस्या है।

अपने कैमरे से दूसरों की गलत तस्वीर खींचने से आपको कुछ भी लाभ नहीं है। अपनी दूरबीन से दूसरों की बुराइयों में झांकने से क्या मिलने वाला है? इस आदत को, स्वभाव को बदलो। गुण को ग्रहण करो, दुर्गुण को छोड़ दो।

भगवान महावीर के एक छोटे बाल शिष्य थे, अयवंता मुनि। नौ वर्ष की सुकुमार वय में दीक्षा ले ली और भगवान के चरणों में रात-दिन सेवा करते हैं। एक बार वर्षा ऋतु के समय स्थण्डिल भूमि को जाते हैं। वहीं पास में एक बरसाती पानी का छोटा-सा नाला बह रहा है। झरने का स्वच्छ पानी उसमें बह रहा है। बाल मुनि को बालक्रीड़ा सूझी, अपना पात्र लेकर उस पानी में तिराने लगे और कहते जा रहे- अहो-मेरी नाव तिरे, मैं भी तिरूं मेरी नाव तिरै!

मुनि मस्ती में झूमकर बोलते जा रहे हैं तभी स्थविर मुनि, वृद्ध साधु उधर से आये, बाल मुनि को यों जल में नाव तिराते देखा तो पास आये और बोले-बाल मुनि! यह क्या कर रहे हो? साधु आचार मर्यादा भूल गये और सचित्त पानी में पातरा तिरा रहे हो?

बाल मुनि को लेकर स्थविर भगवान के पास आये और शिकायत करते हैं-प्रभो! आपका यह बाल शिष्य कितना भोला है, साधु मर्यादा को भी भूल गया-ऐसे बच्चों को संयम दीक्षा देने से तो धर्म की आशातना-विराधना होती है।

भगवान स्थविरों को फरमाते हैं-स्थविर मुनियों! तुम इसकी बाल क्रीड़ा देखकर मुनि का उपहास या अवहेलना मत करो। यह देखो, इसका हृदय कितना सरल है, जल सा निर्मल और स्वच्छ मन है इसका। यह चरम शरीरी जीव है। इसी भव में समस्त कर्मों का क्षय करके मोक्ष जाने वाला है। इस बालदेह के भीतर चरम शरीरी निर्मल दिव्य आत्मा विराजमान है, उसको देखो, और इसकी वंदना करो, इसे खमाओ... देखो, परमात्मा की दिव्य गुण-दृष्टि। पिण्ड में ब्रह्माण्ड का, आत्मा में परमात्मा का दर्शन करने वाली प्रेरणा देते हुए प्रभु फरमाते हैं-भिक्षुओं! किसी की छोटी-सी भूल देखकर उसका उपहास मत करो, न सिया तोत्त गवेसए-उसके छिद्र को, दोष को मत देखो, परन्तु उसकी अन्तरात्मा में जो दिव्यता छिपी है, इस छोटे से बाल मुनि के भीतर जो सरलता, जो भव्यता, संसार सागर में तिरने की तीव्र भावना छिपी है, उसका अभिनन्दन करो, गुणों का वंदन करो। भूल का निन्दन नहीं, किन्तु गुण का वंदन करने की दृष्टि रखो। इसी दृष्टि से तुम्हारे जीवन में सद्गुणों का प्रकाश जगेगा।

बोध

संत राजिन्दर सिंहजी

हम सबका मालिक एक और खुदा की उंगली

एक राजा की कहानी है। राजा की जिंदगी जीते-जीते वह फकीर बन गया। और जब वह फकीर बन गया तो किसी ने उससे पूछा कि तुम फकीर क्यों बन गए? तो राजा ने एक रोचक कथा सुनाई।

उसने कहा, एक दिन मैं नदी किनारे जा रहा था तो मैंने एक छोटे से बच्चे से पूछा कि तुम इस मिट्टी के साथ क्यों खेल रहे हो? इससे तुम्हारे हाथों में गंदगी लगेगी और यह मिट्टी भी अच्छी नहीं है। उस बच्चे ने कहा कि मैं मिट्टी से पैदा हुआ हूं और मैंने सुना है कि मैंने मिट्टी में ही जाकर मिल जाना है। तो फिर मैं मिट्टी के साथ क्यों न खेलूं? यही मेरा खिलौना है।

राजा ने कहा, नहीं, तुम मेरे साथ मेरी राजधानी में चलो। तुम्हें जो कुछ चाहिए, वह मैं तुम्हें दूंगा– बढ़िया से बढ़िया खिलौने, रहने की अच्छी जगह ताकि तुम आराम से अपनी जिंदगी गुजार सको और अच्छी-अच्छी चीजों के साथ खेल सको।

बच्चे ने कहा, मैं आपके साथ जाने को तैयार हूं लेकिन मेरी कुछ शर्तें हैं। राजा ने पूछा, क्या शर्तें हैं? बच्चे ने कहा, पहली शर्त यह है कि जब मैं सोऊं तो तुम मेरी रखवाली करना। देखना, मेरे साथ कोई गड़बड़ न हो। जब मुझे खाना खाना हो, तो तुम खुद खाए बगैर यह देखना कि मैं खाना खा पाऊं, मेरा पेट भरा रहे। जो कपड़े मुझे पहनने को चाहिए, तुम पहले मेरे लिए उनका प्रबंध करना, और मैं जहां भी जाऊं, तुम मेरे साथ रहना, मेरे अंग-संग रहना।

राजा ने कहा, यह तो नामुमकिन है, यह संभव नहीं हो सकता। मेरे ऊपर तो बहुत-सी जिम्मेदारियां हैं, यह सब मैं नहीं कर सकता। तो बच्चे ने कहा, मैं तुम्हारे साथ जाने को तैयार नहीं। उसने कहा, जो मेरा मालिक है, वह यह सब मुझे देता है।

राजा ने कहा ऐसे मालिक से तो मुझे भी मिलवाओ, मैं भी उससे मिलना चाहता हूं। तो उस बच्चे ने कहा कि आप यहां से एक मील दूर जाओ। वहां एक पेड़ के नीचे एक संतजी बैठे हैं, वे आपको मेरे मालिक से मिला देंगे। राजा संत के पास गया। जब उनके दर्शन किए, उनसे बातचीत की, तो राजा उस दिन के बाद से अपने राज्य की ओर नहीं गया और फकीर बन गया।

यह जानना कि हमारा मालिक कौन है, आम इंसान के बस की बात नहीं। हमारे असली मालिक वह पिता-परमेश्वर हैं, जो हर समय हमारा ध्यान रखे हुए हैं। चाहे हम सोए हुए हों या जगे हुए हों, वे हमारा ख्याल कर रहे हैं कि हमें कोई तकलीफ न हो, हमारे साथ सब कुछ ठीक-ठीक हो। हमें हर समय खाने की चीजें मिलती रहती हैं। चाहे वे कपड़ा पहनें, न पहनें, पर वे हम सबके लिए कपड़े जरूर तैयार रखते हैं। और हर समय, हर पल, हर जगह जहां भी हम हों, वे हमारे अंग-संग रहते हैं। अगर हम जान लें कि हम प्रभु के ही अंग हैं, उन्हीं का रूप हैं, तो फिर हम अपनी असली मंजिल की ओर बढ़ पायेंगे।

महापुरुष हमें यही समझाते हैं कि हम इस माया की दुनिया के जाल में न फंसे। वे जिंदगी के जरिए हमें समझाते हैं कि असलियत क्या है।

हम लोग यह भूल जाते हैं कि हम कौन हैं। हम यही सोचते हैं कि हम यह शरीर हैं, हम यही सोचते हैं कि इस शरीर में हम जो भूमिका निभा रहे हैं, हम वहीं हैं। हम सोचते हैं कि हम पिता हैं, माता हैं, बच्चे हैं, भाई-बहन हैं। हम सोचते हैं कि हम अध्यापक हैं, डॉक्टर हैं, इंजीनियर हैं। परन्तु हम सब भूल जाते हैं कि हम प्रभु की संतान हैं, हम खुदा के बंदे हैं, हम एक-दूसरे से अलग नहीं। प्रभु कहीं आसमान में नहीं, हम सबके अंदर बस रहे हैं। सारे महापुरुष इस धरती पर आकर हमें यही समझाते हैं कि हम यह जानें कि हम कौन हैं।

स्वस्थ रहने के घरेलू नुस्खे

आमः आम का अमचूर वीर्यवर्द्धक, पित्त को कम करने वाला तथा कब्ज के लिए लाभदायक है।

आंवलाः आंवला स्वास्थ्य के लिए उपयोगी है। इसका चूर्ण प्रतिदिन रात को गुनगुने पानी के साथ लेने से मोटापा व पेट संबंधी रोग दूर करता है। यह विटिामिन सी से भरपूर है। वीर्यवर्द्धक तथा रक्तदोष की उत्तम औषधि भी है। दस्त लगने या शरीर में पानी की कमी होने पर इसके चूर्ण को शहद के साथ सेवन अथवा चूर्ण को जल में भिगोकर प्रयोग करना चाहिए।

इलायचीः इलायची अच्छी पाचक, कास रोधक तथा कफनाशक होती है। इसका चूर्ण शहद के साथ प्रयोग करना चाहिए।

ईसबगोल की भूसीः यह कब्ज के लिए उपयोगी है। पेचिश होने पर इसे दूध में भिगोकर शक्कर के साथ सेवन करना चाहिए।

कत्थाः आमतौर पर इसका प्रयोग पान में होता है। पतले दस्त लगने पर दिन में चार-पांच बार दो-दो चुटकी कत्था पानी के साथ लेना चाहिए।

करेलाः करेले को सुखाकर पीसकर चूर्ण बना लें। यह कृमिनाश की अच्छी दवा है।

-बेला गर्ग

डॉ. हीरालाल छाजेड़ 'जैन'

सर्दी का मौसम और हमारा भोजन

आयुर्वेद विशेषज्ञों ने अपने ग्रंथों में मानवजाति को निरोग रखने के लिए ऋतुओं के अनुसार आहार-विहार व चर्या का विस्तृत व लाभदायक रूप से वर्णन किया है। हमारे पूर्वज इन सब बातों पर बहुत ध्यान रखते थे कि कौनसी ऋतु में स्वस्थ दृष्टि से क्या खाना क्या न खाना उचित है। साथ में इस पर भी नजर रखते थे कि बालकों, युवाओं, वृद्धों, स्त्रियों, पुरुषों तथा गर्भवती को क्या व कौनसा पदार्थ लेना है। परन्तु समय के साथ संयुक्त परिवारों का चलन कम हो गया और एकल परिवारों को इसका समुचित ज्ञान न होने के कारण पथ्य-अपथ्य जो भी अच्छा लगता है खाने में संकोच नहीं करते हैं। सर्दी में ठंडी आइसक्रीम व पेय पदार्थ जैसी वस्तुओं का भी धड़ल्ले से उपयोग करते हैं।

शीतकाल के प्रभाव

शीतकाल में सूर्य की किरणें तिरछी पड़ने के कारण हमारा बाहरी वातावरण बहुत ठंडा हो जाता है जिसके प्रभाव से हमारे शरीर के रोमकूप सिकुड़ जाते हैं, जिसके कारण शरीर की गर्मी बाहर नहीं निकल पाती। अत: अंदर की गर्मी बढ़ जाने के कारण हमारी जठराग्नि (पाचनशक्ति) तेज हो जाने के कारण भारी व गरिष्ठ खाद्य पदार्थों को पचाने में पूर्ण सक्षम हो जाती है। फलस्वरूप उनका रस भी अच्छा बनता है और अधिक रस बनने से रक्त, मांस, मज्जा आदि का अच्छा विकास होकर शरीर निरोग बनता है। इस मौसम में रातें बड़ी व दिन छोटे होते हैं। अत: रात्रि में किया हुआ भोजन रात में ही पच जाता है। अत: शीतकाल में प्रात: के नाश्ते में गरिष्ठ पाक, लड्डू, दूध, मलाई, मेवा, हलुआ लिया जा सकता है। किन्तु मधुमेह, हृदयरोगी, मोटापाग्रस्त आदि रोगियों को इनसे बचना चाहिए। उनके लिए बाजरे का दलिया व थोड़ा गुड़ खा लेना ही उपयोगी है।

आहार-विहार

शीत ऋतु में पालक, मूली, पत्तागोभी, प्याज पत्ती, गाजर, आलू-टमाटर, लौकी, मेथी, शलजम, चुकन्दर, अरबी, कच्ची हल्दी तथा गवारपाठे का सेवन बड़ा लाभदायक रहता है। खट्टी-मिट्ठी चटनियां, मैदा, सूजी, गन्ने से बने पदार्थ आंवला मुरब्बा व बल प्रदान करने वाले टॉनिक, रस-रसायन, लेह, चटनी, चूर्ण, पाक, सूखे मेवे आदि का उचित प्रयोग भी सुडौल शरीर की रचना के लिए उपयोगी बनते हैं। सफेद तिल, मूंगफली थोड़े से गुड़ के साथ व आंवले का मुरब्बा सस्ते पदार्थों की श्रेणी में अच्छे उपयोगी माने गये हैं। सूखे मेवे जो कि अनेक तत्व लिए हुए हैं। आयरन, फाइबर, जिंक, मिनरल आदि से भरपूर होते हैं व हमारे शरीर के अलग-अलग अवयव के लिए उनकी अलग भूमिका रहती है। अखरोट मस्तिष्क के लिए, बादाम हृदय के लिए व याददाश्त को बढ़ाने में, अंजीर दूध के साथ लेने पर कब्ज को मिटाता है। इस प्रकार इन सभी का उपयोग अपनी-अपनी विशेषता लिए हुए होते हैं और इस मौसम में काफी उपयोगी माने गये हैं किन्तु इनकी भी मात्रा ज्यादा नहीं लेनी चाहिए। दिन भर में सभी को मिलाकर एक मुट्ठी भरकर खा सकते हैं।

शीतकाल में सूर्य की किरणें तिरछी पड़ने के कारण हमारा बाहरी वातावरण बहुत ठंडा हो जाता है जिसके प्रभाव से हमारे शरीर के रोमकूप सिकुड़ जाते हैं, जिसके कारण शरीर की गर्मी बाहर नहीं निकल पाती। अत: अंदर की गर्मी बढ़ जाने के कारण हमारी जठराग्नि (पाचनशक्ति) तेज हो जाने के कारण भारी व गरिष्ठ खाद्य पदार्थों को पचाने में पूर्ण सक्षम हो जाती है।

भोजन के समय कैसा हो वातावरण? अध्यात्म में भोजन के महत्व पर विशेष ध्यान दिया है। अगर ऋतु के अनुसार भोजन नहीं किया जाता है तो हमारा सूक्ष्म शरीर उसे स्वीकार नहीं करता और स्वास्थ्य बिगड़ जाने का खतरा उपस्थित हो जाता है। यह बात याद रखें कि जो बाहार हम करते हैं उसमें से एक चौथाई से मन बनता है, एक चौथाई से रक्त, एक चौथाई से शुक्र और एक चौथाई मल में जाता है। हमको मन, रक्त और शुक्र की रक्षा करनी है और मल का परित्याग करना होता है। हमारे शास्त्रों में सूक्ष्म विवेचन किया है। शास्त्रों के सिद्धांत हमें अनुभूति में उतारना चाहिए। इनका बड़ा मनोवैज्ञानिक कारण भी है।

भोजन और भजन के समय साधक का प्राणबल सतेज हो जाता है, तो वातावरण के जो अणु होते हैं, वह उनके पास खींचे चले आते हैं। इसलिए हमारे ऋषियों ने जो कहा उस पर ध्यान देना चाहिए कि भोजन के समय वातावरण शुद्ध हो।

–जयश्री टी. कंपनी, नंदी शाही
कटक-753001 (उड़ीसा)

जीवन-दर्शन

पूरन सरमा

अपनी गैर–जिम्मेदारी दूसरे की जिम्मेदारी!

जिम्मेदारियों से पलायन की परम्परा दिनोंदिन मजबूती से अपने पांव जमा रही है। चाहे प्राइवेट सैक्टर का मामला हो अथवा सरकारी कार्यालयों का सर्वत्र एक ऐसी लहर चल पड़ी है कि व्यक्ति अपने से संबंधित कार्य की जिम्मेदारियाँ नहीं लेना चाहता। इसका परिणाम है कि सार्वजनिक सेवाओं में गिरावट आ रही है तथा दायित्व की प्रतिबद्धतायें घटती जा रही हैं। किसी संस्थान में आवेदन पत्र प्रस्तुत करने की अंतिम तारीख का मसला ले लीजिये, चाहे वहां से सूचना आने में विलंब हुआ हो, परन्तु विलंब की जिम्मेदारी प्रार्थी पर डालकर आवेदन स्वीकार करने से इंकार कर दिया जायेगा अथवा उसके पीछे इतना व्यायाम करना पड़ेगा कि आदमी परेशान होकर आगे और किये जाने वाले कार्यों के प्रति बहुत ज्यादा उदासीन हो जायेगा।

एक बस यात्रा का वाकया मुझे याद है। ठसाठस भरी हुई बस। अटैची हाथ में थी। कण्डक्टर उसे साथ लेकर बैठने से मना करने लगा। मैंने कहा-'भाई इसमें मेरे बहुत महत्त्वपूर्ण कागजात तथा पहनने के कपड़े आदि हैं। कोई ले गया तो जीवन चौपट हो जायेगा। इस समय मैं एक नौकरी के इण्टरव्यू के लिए जा रहा हूँ।'

बस कण्डक्टर ने दो-टूक जवाब दिया-'आप दूसरी बस से आ जाइयेगा। मैं आपको इस तरह नहीं ले जा सकता।'

चूंकि मुझे 'इण्टरव्यू' में पहुँचने की जल्दी थी। अत: अटैची को ऊपर सामान के बीच संभाल कर रख दिया। अपने गंतव्य स्थल पर पहुंचकर देखा तो अटैची गायब थी। मैंने कण्डक्टर से कहा-'भैया मेरी अटैची नहीं मिल रही है।'

'मुझे क्या पता साहब, आपको ध्यान रखना चाहिए। सफर में सभी तरह के लोग आते हैं। पता नहीं कौन मार गया होगा।'

'लेकिन अटैची तुमने ऊपर रखवायी थी। अब इसमें मेरी जिम्मेदारी कहां रह गई ऊपर की सुरक्षा तो तुम्हें ही करनी थी।' मैंने कहा।

'वह बस के अंदर लिखी पंक्ति की ओर इशारा करके बोला-'इसे पढ़ लीजिये।'

मैंने पंक्ति को पढ़ा-'यात्री अपने सामान की रक्षा स्वयं करें।' मैं क्रोध में बोला-'लेकिन ऊपर कैसे देखता।' वह तो अनसुनी करके गाड़ी लेकर रवाना हो गया। मैं किकर्तव्यविमूढ़ सा बस अड्डे पर खड़ा सोचता रहा। वह तो खैर मनाइये कोई सज्जन व्यक्ति गलती से ले गया था। वह मुझसे पहले बस से उतरकर अपनी अटैची के भरोसे मेरी ले गया था। मैंने उसके हाथ में अटैची देखकर कहा कि यह मेरी है।

वह भी बोला कि लेकिन मेरी कहां है ? मैंने बताया कि तुम्हारी तो शायद बस के साथ ही चली गई है। मैंने अपने सामान की पहचान करवाकर अटैची उनसे लेकर इण्टरव्यू में पहुंचा। परन्तु वे सज्जन परेशान थे। वे दूसरी गाड़ी से अपनी अटैची लेने दौड़े, पता नहीं क्या हुआ होगा, मैं नहीं जानता।

यहां कहने का तात्पर्य है कि यात्री अपने सामान की रक्षा करता है तो करने नहीं दी जाती और जब सामान गायब हो जाये तो कण्डक्टर सुरक्षा की गारंटी नहीं लेता तथा अपने दायित्व से मुकरता है। ऐसे हालात में यात्राओं में होने वाली दुर्घटनाओं की जिम्मेदारी किस पर हो ? होना तो यह चाहिए कि बस में जितनी सीटें है उतने ही टिकट देकर, कण्डक्टर टिकिट देने के दायित्व के साथ-साथ यात्रियों के सामान पर भी नजर रखे अथवा एक और कण्डक्टर इसके लिए रखा जाये या फिर जब ठसाठस भरी हुई होगी ही नहीं तो यात्री अपना सामान अपने साथ लेकर बैठ सकेगा तथा अपने सामान की चौकस कर सकेगा। आये दिन सफर में होने वाली दुर्घटनाओं का संकलन किया जाये तो एक बहुत बड़ा आंकड़ा यात्रियों की परेशानियों का सामने आता है।

पूरे देश की सार्वजनिक सेवाओं की स्थिति 'यात्री अपने सामान की रक्षा स्वयं करें' पर चल रही है। सारी जिम्मेदारियां आपकी है। चाहे प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से आपका कोई संबंध उस मसले से हो या नहीं। आपने गैस बुक कराई, वह हुई या नहीं राम जाने। आपका फार्म कार्यालय में पहुंचा या नहीं ऊपर वाला जाने। आपके मकान की बुकिंग का मसला आठ साल बाद क्या गुल खिलायेगा-भगवान भरोसे। ऐसे हालात में सार्वजनिक सेवा व्यवस्था से शनै: शनै: जन सामान्य का विश्वास समाप्त हो रहा है तथा लोग दूसरे मार्ग अपनाकर अपने आपको आश्वस्त करने में लगे हैं। डाक व्यवस्था का भी यही हाल बनता जा रहा है। इसलिए लोग निजी डाक सेवा पर विश्वास करने लगे हैं। दायित्वों के प्रति सजग होने के साथ-साथ, कर्मचारियों का उन्हें कानूनी रूप से भी बांधना चाहिए ताकि वे उनसे नहीं मुकरें अन्यथा हाल-बेहाल होने में तो कसर ही क्या रह गई है ? यात्री जब अपने सामान की रक्षा खुद करेगा तो तुम्हारे दायित्वों का क्या होगा? यानी अपनी गैर-जिम्मेदारी को दूसरे की जिम्मेदारी बनाकर थोपते रहने की अराजकता कब तक चलेगी ?

-124/61-62, अग्रवाल फार्म
मानसरोवर, जयपुर-302020 (राजस्थान)

खासियत

कमलेश व्यास 'कमल'

पंचभूत मतभेद नहीं रखते

ब्रिटेन में रहने वाले एक भारतीय श्री देवेन्दर घई ने लंबी कानूनी लड़ाई आखिर 10 फरवरी 2010 को जीत ही ली। उनकी यह कानूनी लड़ाई शव को शवदाह गृह के बाहर खुले में जलाने बाबत थी जो उन्हें कुछ शर्तों के साथ हासिल हो गई। श्री देवेन्दर घई जो कि एक आध्यात्मिक गुरु है, निश्चित ही सनातन धर्म को जाननेवाले होंगे जिसके अनुसार जीवन और मरण का न 'अथ' है न 'इति', यह तो सृष्टि के आरंभ से निरंतर प्रवहमान है। पहले इसी प्रकार सूरिनाम में एक भारतीय के लिए उसकी पत्नी ने अपने पति का अंतिम संस्कार तब तक नहीं किया जब तक कि वहां के राजकीय नियम के दाह संस्कार का प्रावधान न जोड़ा गया। तब से सूरिनाम में भी दाह संस्कार होने लगा। वस्तुत: शरीर पंच तत्वों, पृथ्वी, जल, आकाश, अग्नि और वायु से मिलकर बना है और मरने के बाद शरीर को किसी भी प्रक्रिया से नष्ट करें वह इन्हीं पंचभूतों में विलीन हो जाता है। लेकिन परिजनों, नाते रिश्तेदारों का मृत व्यक्ति के साथ जो भावनात्मक लगाव होता है वह बना रहता है। इसलिए इस विषय में सब अपने-अपने धर्म एवं मतानुसार ही उसका क्रियाकर्म करना चाहते हैं। चूंकि यह मामला अत्यंत संवेदनशील है। अत: सभी को अपने-अपने धर्म के अनुसार अंतिम संस्कार की इजाजत मिलनी ही चाहिए लेकिन देश, काल और परिस्थिति के अनुसार इसमें परिवर्तन करना पड़े तो कर लेना चाहिए। कई देशों में परिस्थिति अनुसार अंतिम संस्कार की प्रक्रिया में बकायदा कानून बनाकर परिवर्तन किया भी है।

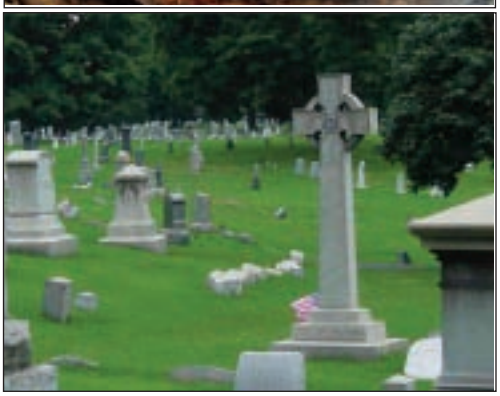

सन् 1883 में डॉक्टर विलियम प्राइस ने अपने बच्चे का दाह संस्कार करने का प्रयास किया तब ब्रिटेन में उन पर मुकदमा दायर कर दिया गया। जिसका फैसला अदालत ने उनके हक में दिया था। 1902 में ब्रिटेन में प्रथम शवदाह विधेयक पारित हुआ। था। 20वीं शताब्दी के अंत तक वहां शवदाह और दफनाने का प्रतिशत लगभग बराबर हो गया था। अमेरिका में शवदाह का पहला प्रकरण 1876 में मिलता है। 1970 में वहां एक वर्ष में 88000 शवों का दाह संस्कार हुआ था। उससे पहले इतने शव दाह नहीं हुए। 1937 में एक अंतर्राष्ट्रीय शव दाह संगठन बना जिसका मुख्यालय लंदन में कार्यरत है।

विश्व में ऐसे समुदाय भी हैं जो यह मानते हैं कि मरने के बाद भी मृत शरीर से उसकी आत्मा का संबंध हमेशा के लिए समाप्त नहीं होता है। आत्मा का उस शरीर में आना-जाना लगा रहता है। इसलिए ये लोग शवों को सुरक्षित रखते हैं। 'ममी' इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। कुछ समुदाय मृत देह के साथ उसके बर्तन, खाने का सामान,उसके द्वारा उपयोग किया हुआ फर्नीचर इत्यादि भी रखते हैं।

विश्व की कुछ जातियों के बच्चों के मरने पर स्त्रियां अपने स्तनों से दूध निकालकर मृत बच्चों के मुंह में भर देती हैं। संसार में एक ऐसा देश भी है जहां कब्र में एक छेद रखा जाता है जिसमें से मृतक के लिए भोजन इत्यादि पहुंचाया जाता है। ईसाई धर्म में मृत शरीर को दफनाने की प्रथा है, उनके अनुसार कब्र आराम की जगह है। जब सृष्टि के अंत में सभी मृत व्यक्तियों के कर्मों का हिसाब होगा उस दिन मसीह में विश्वास रखनेवालों को स्वर्ग और अविश्वास करनेवालों को नरक में हमेशा के लिए भेज दिया जाएगा। इससे मिलती-जुलती मान्यता इस्लाम को मानने वालों की भी है। इस्लाम धर्म अनुसार कयामत के दिन से चालीस रोज तक बारिश होगी जिस वजह से 'अल अज्ब' (रीढ़ की अंतिम हड्डी जो पूरा शरीर नष्ट हो जाने के बाद भी बची रहती है) से सभी मृतक उठ खड़े होंगे। 'मुनकिर' और 'नकीर' नाम के दो फरिश्तें मृतक के दायें-बायें बैठकर उसके अच्छे-बुरे कर्मों का हिसाब करेंगे और उस आधार पर उसे जन्नत या दोज़ख में भेजा जायेगा।

पारसी धर्म में मुर्दे को न गाड़ा जाता है और न जलाया जाता है अपितु उसे खुली जगह में एक ऊंचे स्थान पर जिसे 'टावर ऑफ साइलेन्स' कहते हैं गिद्ध, चील इत्यादि पक्षियों द्वारा खाने के लिए रख दिया जाता है। पारसियों का मानना है कि जिस प्रकार मनुष्य अपनी जीवित अवस्था में शुभ कार्य करता है, उसी प्रकार मरने के बाद भी शव पक्षियों की क्षुधा शांति का साधन बनें।

हिन्दू या वैदिक धर्म में मृत शरीर को जलाने एवं जल में प्रवाहित करने की परम्परा है। वैदिक धर्म में मान्यता है कि शरीर पंच तत्व से मिलकर बना है और उसमें स्थित आत्मा अजर-अमर है। इसलिए आत्मा रहित शरीर को जलाकर जल्द पंचभूतों में विलीन कर देना चाहिए। शव को जल में प्रवाहित करने की परम्परा विशेष रूप से संन्यासियों के लिए है। मनुस्मृति के अनुसार संन्यासी 'अनग्नि' होता है। इसलिए उसके शव को जलाने के बजाय जल में प्रवाहित करना चाहिए।

खैर, शव तो शव है फिर आप उसे कब्र में दफनाएं, जलाएं, जल में प्रवाहित करें या खुले स्थान पर पक्षियों के भोजन के तौर पर रखें। जिन पांच तत्वों से शरीर बना है उनमें किसी न किसी तरह से समाहित हो ही जाता है। अगर गाड़ते हैं तो आप उसे पृथ्वी तत्व के, जलाते हैं तो अग्नि तत्व के, जल में प्रवाहित करते हैं तो जल तत्व के और खुले स्थान में रखते हैं तो वायु एवं आकाश तत्व के हवाले करते हैं और इन पंचभूतों में कोई साम्प्रदायिक वैमनस्य नहीं है, इसलिए ये बड़ी खामोशी से अपने कार्य को अंजाम देते हैं। प्रकृति का अपना विराट धर्मदर्शन है जिसमें से सभी धर्मों का प्रादुर्भाव हुआ है और इसी में सबको एक दिन समाहित होना है।

-20/7, कांकरिया परिसर, अंकपात मार्ग
उज्जैन-456006 (म.प्र.)

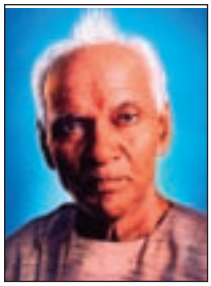

अवलोकन

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य

श्रेष्ठ जीवन का मूलाधार

आज प्रत्येक व्यक्ति, समाज, सरकार और संपूर्ण विश्व भयग्रस्त है। इस भय का कारण उस शारीरिक, मानसिक, भौतिक, नैतिक, सामाजिक या राजनैतिक स्थिति की कल्पना है, जो हमारी आशाओं और आकांक्षाओं के विपरीत है। मूर्धन्य मनीषियों ने इस आशंका के निम्न कारण बताए हैं-

- कर्तव्य में आस्था का न होना।
- संसार के अटल नियमों की या तो जानकारी न होना या जानकारी होते हुए भी उनमें दृढ़ विश्वास और आस्था का अभाव होना।
- भौतिक पदार्थों में सुख की अनुभूति और उसके वियोग में दु:ख का भाव।
- ईश्वर की न्याय, व्यवस्था तथा दयालुता में अविश्वास होना।

यदि मनुष्य अपने कर्तव्य को सुख-दु:ख, लाभ-हानि, यश-अपयश आदि को समान समझ कर केवल कर्तव्य के लिए पालन नहीं करता तो उसे हानि, दु:ख, अपयश का भय लगा ही रहेगा। भय के सभी कारण ऐसे होते हैं, जिन्हें हम स्वयं उत्पन्न करते हैं और मकड़ी के जाल की तरह उसमें कैद होकर रह जाते हैं।

वेदों में कहा गया है कि यद्यपि भौतिक पदार्थों में वास्तविक सुख नहीं है, फिर भी यदि मनुष्य सुख का साधन समझ कर उनका संग्रह करता है तो उनके विग्रह पर उसे दुख का भय बना रहना स्वाभाविक है।

इस सृष्टि का एकमात्र संचालक ईश्वर है। संपूर्ण विश्व ब्रह्मांड उसके नियोजन और नियमों के अनुसार चलता है। जो भी व्यक्ति उसके सहारे अच्छा काम करता है, वह प्रगति पथ पर आगे ही बढ़ता जाता है।

संयोगवश यदि मार्ग में संकट पड़ भी जाते हैं तो वह दया करके उसे संकट से निकालता है और यदि वह नहीं निकालता है तो भी उसमें हमारा और विश्व का कल्याण निहित रहता है। यदि हमें ईश्वर की दयालुता पर विश्वास नहीं है तो कोई भी कठिन काम शुरू करने व उसे पूरा करने में असफलता का भय बना रहता है।

भय के उपर्युक्त कारणों को दूर कर दिया जाय तो प्रत्येक मनुष्य में निर्भीकता का दिव्य गुण आ जाएगा। यह निर्भीकता तीन प्रकार से आती है, विज्ञ निर्भीकता, विवेक निर्भीकता और ईश्वरनिष्ठ निर्भीकता।

विज्ञ निर्भीकता: यदि मनुष्य आसन्न कठिनाइयों और खतरों के समाधान का मार्ग जान लेता है तो वह उनकी ओर से निर्भीक हो जाता है। वस्तुत: मनुष्य में अनंत शक्तियों का भंडारागार है। जब वह संकल्पबद्ध हो सुनियोजित ढंग से आगे बढ़ने का प्रयत्न करता है तो पर्वत जैसी ऊंची बाधाएं भी मार्ग देने के लिए बाध्य हो जाती हैं।

विवेक निर्भीकता: जो विवेक से काम लेते हैं, सत्-असत् को जानते हैं और मन तथा बुद्धि को संतुलित रखते हैं, उनमें इतना आत्मविश्वास विकसित हो जाता है कि फिर उन्हें किसी प्रतिकूल परिस्थिति से भय नहीं लगता। भय की उत्पत्ति विवेकहीनता से होती है।

ईश्वरनिष्ठ निर्भीकता: जिस व्यक्ति को ईश्वर की सर्वव्यापकता, सर्वशक्ति संपन्नता, दया और न्याय पर पूर्ण विश्वास है, जो प्रत्येक प्राणी में ईश्वर का स्वरूप देखता है, जो सृष्टि को ईश्वर की अभिव्यक्ति मानता है, भय उसके पास तक नहीं फटकता।

मानव जीवन के सर्वांगीण विकास के लिए निर्भीकता परम आवश्यक है। इसके बिना कोई व्यक्ति महान नहीं बन सकता। निर्भीकता से मनुष्य को इतना बल मिलता है कि वह बड़े से बड़ा त्याग कर सकता है और कठिन से कठिन परिस्थितियों का भी सामना करने में सक्षम हो सकता है।

जानिए वास्तु से जुड़ी कुछ महत्वपूर्ण बातें

- मुख्य द्वार के दोनों तरफ अंदर या बाहर सुविधानुसार तुलसी के पौधें अवश्य लगाना चाहिए व चाहें तो मनी प्लांट भी लगा सकते हैं।
- घर में अशुभ चित्र न लगाएं जैसे युद्ध, राक्षस, क्रोधी, गदंगी, सूखे पेड़, उजड़े बगीचे, ऐतिहासिक खण्डहर, मकबरे आदि।
- शयनकक्ष में दर्पण नहीं रखना चाहिए। अगर सोते समय आपका प्रतिबिम्ब इसमें प्रतिबिम्बित होता है तो स्वास्थ्य खराब होने की पूरी संभावना है। यहां तक कि बहुत ज्यादा लंबे समय तक सोने से आदमी बहुत गंभीर बीमारी का शिकार हो सकता है।
- घर में दीवार या हाथ घड़ी का बंद रहना भी अशुभ रहता है।

- घर की मुख्य पूजा में गणपतिजी की मूर्ति अवश्य रखें। गणपति प्रथम देव हैं।
- घर में मकड़ी के जाले या अन्य प्रकार के जाले होना उचित नहीं है, इनको तुरंत निकाल देना चाहिए।
- रविवार के दिन घर में तुलसी का पौधा लगाना, तुलसी के पत्ते तोड़ना, तुलसी का पौधा खरीदना शुभ नहीं होता।
- घर के किसी भी कोने में अलमारी या अन्य सामान रखना उचित नहीं है। इसे कोने से थोड़ी जगह छोड़कर रखना ठीक रहता है।

-रामेश्वर प्रसाद
(वास्तु विशेषज्ञ)

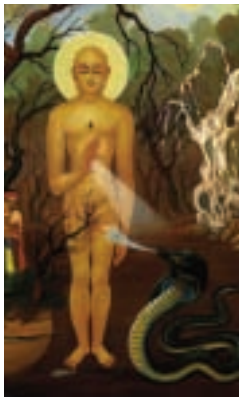

महावीर कहते थे कि संसार में लोक कल्याण, विश्व शांति, सद्भाव और समभाव के लिए अपरिग्रह का भाव जरूरी है।

प्रसंग

शिखरचंद जैन

महावीर के उपदेश और हमारा जीवन

एक दिन जब भगवान महावीर मगध (बिहार) में ऋजुकूला नदी के किनारे साल वृक्ष के नीचे तपस्या रत थे, उनको कैवल्य ज्ञान प्राप्त हुआ। वे अरिहंत, जिन और वीतराग हो गए। जिसे कैवल्य ज्ञान प्राप्त हो जाए, वह तीनो कालों को एक साथ जानता है। इसके लिए महावीर ने ऋजुकूला के तट पर तीन वर्ष, पांच मास और पन्द्रह दिवस तक घोर तपस्या की थी।

अरिहंत भगवान महावीर अपने उपदेश अत्यंत साधारण भाषा में देते थे। वह इतना सहज होता था कि उसे प्रत्येक जन अपनी भाषा में ग्रहण कर लेता था। कहते हैं कि जहां भी उनका उपदेश होता था, वहां कुबेर स्वयं सभागृह का निर्माण कराता था। संभवत: इसका आशय यह रहा हो कि अरिहंत के उपदेश इतने लोकप्रिय होते थे कि लोग उत्साहपूर्वक पहले ही वहां सभा भवन बना लेते थे।

महावीर अपने समय में इस संसार में व्याप्त हिंसा का वातावरण, स्त्रियों की हीन दशा और असहाय लोगों की वेदना देखी। ऐसे वातावरण में उन्होंने निश्चय किया कि वे सन्मार्ग प्राप्त करेंगे और विषय भोग, हिंसा परिग्रह और असत्य में गोता लगा रहे संसारीजनों का उद्धार करेंगे।

महावीर ने अनेक स्थानों जैसे- कुरु, मगध, कामरूप, अंग, बंग, विदर्भ और गौड़, इत्यादि में विहार किया और लोगों को अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह की शिक्षा दी। वे कहते थे कि हिंसा केवल मारना नहीं हैं, बल्कि कठोर वचन- काया को संयम में न रखना और मार्ग में देखकर न चलना भी हिंसा को बढ़ावा देते हैं।

महावीर कहा कि चोरी के माल को खरीदना, झूठे साक्ष्य तैयार करना और कर चोरी करना आदि मनुष्य के आत्म विकास के शत्रु हैं। इस तरह यह सब दैनिक जीवन के शत्रु हैं। इस तरह महावीर दैनिक जीवन के छोटे-छोटे उदाहरणों के माध्यम से लोगों को शिक्षित करते थे। उनके ऐसे उपदेशों से ही प्रभावित होकर लोगों ने पशु बलि बंद कर दी और सदाचार का जीवन व्यतीत करने लगे।

महावीर नारियों के प्रति असमानता, अत्याचार और उत्पीड़न का घोर विरोध किया। इस सामाजिक दोष को दूर करने के लिए उन्होंने स्त्रियों को अपने संघ में स्थान दिया। उनके संघ में श्रमण, श्रमणी, श्रावक और श्राविका सभी समान अधिकार से रहते थे। उन्होंने जातिवाद का भी घोर विरोध किया और कहा कि कर्म से ही मनुष्य छोटा या बड़ा बनता है। जन्म से सभी एक समान पैदा होते हैं, किन्तु कर्म से मनुष्य ब्राह्मण या विद्वान बनता है।

महावीर कहते थे कि संसार में लोक कल्याण, विश्व शांति, सद्भाव और समभाव के लिए अपरिग्रह का भाव जरूरी है। यही अहिंसा का मूल आधार है। परिग्रह की प्रवृत्ति अपने मन को अशांत बनाती है और हर प्रकार से दूसरों की शांति भंग करती है। लेकिन आज बड़ा राष्ट्र छोटे राष्ट्र को हड़पना चाहता है और धनवान व्यक्ति परिग्रह के द्वारा असहायों के लिए समस्याएं पैदा करता है। वह संसाधनों पर कब्जा कर लेता है। इससे मानसिक क्रोध बढ़ता है और हिंसा को बढ़ावा मिलता है।

महावीर कहते थे कि संसार में आत्म कल्याण के लिए एक-दूसरे का सहयोग परम आवश्यक है। कोई भी प्राणी अकेला नहीं चल सकता, उसको दूसरे की सहायता अवश्य चाहिए। इसलिए सदा एक-दूसरे के सहायक बनें। इसी तरह बड़ा राष्ट्र छोटे राष्ट्र का सहायक बने, समर्थ असमर्थ का पोषक बने।

आज की दुनिया के कुबेर कम्प्यूटर जगत के बादशाह बिल गेट्स है। हालांकि वे व्यवसायी हैं, पर वास्तव में अपरिग्रहवादी हैं। उन्होंने गरीबी, भुखमरी, अशिक्षा और बीमारी को दूर करने के लिए अपना खजाना खोल दिया। यदि हम भी महावीर के बताये मार्ग पर चलें, तो एक शांतिपूर्ण जीवन व्यतीत कर सकेंगे।

जन्म-मरण एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। जन्म के बाद मरण निश्चित है। भगवान महावीर ने 72 वर्ष की आयु में 527 ईस्वी पूर्व पावापुरी में निर्वाण प्राप्त किया।

धर्म का सार है—जियो और जीने दो

लाजपत राय सभरवाल

एक स्वस्थ, चरित्रवान, सुसंस्कारित समाज के निर्माण के लिए हमारे धर्मगुरुओं ने धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के पुरुषार्थ चतुष्टय की उपयोगी विधि दी। इन चार पुरुषार्थों से इहलोक और परलोक को सुखमय बनाया जा सकता है। पहली सीढ़ी धर्म है, फिर अर्थ और काम तथा अंत में मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है। धर्म कोई उपासना पद्धति न होकर एक विराट और विलक्षण जीवन पद्धति है। धर्म जीने की कला है। धर्म का संबंध आत्मा से है। धर्म आदमी को पशुता से मानवता की ओर प्रेरित करता है। 'जीवेत एवं जीवयेत'- जियो और जीने दो के सिद्धांत का पालन करना और शांतिपूर्वक जीवन के आनंद को भोगना धर्म पद्धति का भाग है। अनुशासन के अनुसार चलना धर्म है। हृदय की पवित्रता ही धर्म का वास्तविक स्वरूप है। धर्म का सार जीवन में संयम का होना है। मनुष्य तभी श्रेष्ठ माना जाएगा, जब वह अपनी श्रेष्ठता प्रमाणित कर सके और इसका दायित्व हम पर है। मनीषी कहते हैं जिससे मनोरथ की सिद्धि हो, हमारी वृद्धि हो, उन्नति हो और हम संसार के बंधन से मुक्त हो जाएं, वही धर्म है। और ऐसा मनुष्य ही कर सकता है क्योंकि प्रकृति के राज्य में सबसे उन्नत प्राणी मनुष्य ही है। अपने को जीवित रखना और दूसरों को जीवित रहने में मदद करना ही हमारा धर्म है।

धर्म के बाद दूसरा स्थान अर्थ का है। जीवन की प्रगति का मूल आधार ही धन है। धर्म ही हमें सुझाता है कि अर्थोपार्जन करते हुए प्रकृति से, समाज से हमने जितना लिया है, उससे अधिक उसे लौटाने का प्रयास करते रहें। धर्म और अर्थ के बाद काम को तीसरा स्थान दिया गया है। भारतीय संस्कृति में 'काम' को धर्मपूर्वक, संयम व मर्यादा में बांध कर रखा गया है। काम के भोगपक्ष को मर्यादा, प्राकृतिक तथा सामाजिक नियमों व बंधनों में भोगने की व्यवस्था दी गई है। काम जीवन की प्राणशक्ति है। धर्म, अर्थ, काम—ये तीनों मोक्ष प्राप्ति के साधन हैं।

कर्म का अभ्यास

मृदुला सिन्हा

विवेकानंद के जीवन का एक प्रसंग है। उनका एक निठल्ला नौकर था। आलसी। वह उठता ही नहीं था। विवेकानंदजी ने कहा–'तुम्हें जब देखता हूं, बैठे रहते हो। कुछ तो करो।' उसने पूछा 'मैं क्या करूं? विवेकानंदजी ने कहा–'दुनिया में भांति-भांति के काम हैं तुम अपनी बुद्धि-विवेक, ज्ञान-अनुभव और शारीरिक क्षमता के अनुसार जो कर सकते हो, करो।' पर इससे भी उस पर कोई असर नहीं हुआ। उसकी परेशानी देखकर विवेकानंदजी ने उससे फिर कहा 'तू चोरी किया कर। आज से तुम चोरी करना ही प्रारंभ कर।' वह नौजवान भी सकते में आया। वहीं बैठे एक अन्य श्रोता भी सुनकर अचंभित हुए। पूछा-'स्वामीजी! आपने इसे चोरी करने की सीख क्यों दी? चोरी करना तो पाप है।'

विवेकानंदजी ने मुस्कराते हुए कहा–'इस नौजवान के सामने पाप और पुण्य की समस्या नहीं है। समस्या तो है कि यह करे क्या? चोरी भी एक कार्य है। इसे काम चाहिए। इसलिए मैंने इसे और कुछ नहीं तो चोरी करने का सुझाव दिया। किसी भी कर्म के लिए शरीर, मन-बुद्धि से पूर्व तैयारी करनी पड़ती है। जिसे काम की योजना कहेंगे। कर्म करते हुए भी मन, बुद्धि, शरीर तत्पर रहता है। और कर्म की समाप्ति पर भी मन, बुद्धि और शरीर से उसके औचित्य-अनौचित्य पर विचार करते हैं। इसलिए किसी भी काम में शरीर, मन, बुद्धि को एकाग्रता से लगाए रखना ही बुद्धिमानी है। जहां तक चौर्य कर्म की बात है, इसमें अधिक सतर्कता बरतनी पड़ती है। और शरीर, मन, बुद्धि की जरूरत पड़ती है। यदि किसी ने चारी करना ही प्रारंभ किया हो तो करने दो। उसे कर्म करने का अभ्यास तो होगा। आगे चलकर वह अपने विवेक से उसे छोड़ भी सकता है। शिक्षक या पुलिस बनने जैसा सहज और समाजोपयोगी कार्य भी अपना सकता है। पहले उसे कर्मयोगी तो बनने दो।' यहां सवाल कर्म से फल का नहीं, उसके समाजोपयोगी और समाज विरोधी होने का नहीं, सवाल तो व्यक्ति की सक्रियता का है। बिना कर्म के जिया नहीं जा सकता। निठल्ला आदमी अपने लिए ही नहीं, दूसरों के लिए भी बोझ होता है। कर्म से ही जिन्दगी आसान हो जाती है। बिना काम के दो पल काटना भी मुश्किल है। उसका खाली मन होता है। खाली मन शैतान का घर होता है। इसलिए कर्म ही पूजा है।

समाज में ऐसे भी लोग हैं, जिन्होंने काम करने का अभ्यास ही नहीं डाला। इसलिए वे आसान से आसान काम प्रारंभ करने में भी डरते हैं। उन्हें किसी काम में आनंद भी नहीं आता। दरअसल, कठिन से कठिन काम करने में व्यक्ति को आनंद की अनुभूति होती है। काम भी एक नशा है। जिन्हें काम करने का नशा होता है, वे बिना काम के दो पल नहीं बैठ सकते। दूसरों से बात करते-करते भी वे अपने काम की योजना बनाते रहते हैं। काम करने का अभ्यास हो जाने पर कोई भी काम कठिन नहीं लगता। काम भी यदि आस्था और लगन से किया जाए तो काम का आनंद भी आता ही है।

श्री आनंदमूर्ति

मैं का बोध

विकास के क्रम में सबसे अंत में मनुष्य का आविर्भाव हुआ। है। सगुण ब्रह्म की मानसिक देह से उत्पन्न उसके पंचभौतिक देह में चैतन्य का विकास व्यापक रूप से हुआ। इस व्यापक विकसित चैतन्य के प्रतिफलन को ही अणुचैतन्य या आत्मा कहते हैं और इस पंचभौतिक देह को मानव देह कहते हैं अर्थात् मनुष्य के अणुचैतन्य तथा देह दोनों ही हैं, किन्तु वह दोनों में से कोई भी नहीं हैं, क्योंकि यदि वह आत्मा होता तो 'मेरी आत्मा' नहीं कह सकता और यदि वह देह होता तो 'मेरी देह' नहीं कह सकता।

सूक्ष्म मैंपन का बोध एक भावमय सत्ता है। थोड़ा गंभीर भाव से विचारने पर पता चलता है कि भावना द्वारा ही मैंपन का बोध की उत्पत्ति हुई है। कर्म की भावना या कर्म का होना चैतन्य का सापेक्ष है, इसलिए मैंपन का बोध चैतन्य पर ही निर्भरशील है, मैंपन का बोध चैतन्य की ही एक मानसिक अभिव्यक्ति है। चैतन्य के अभाव में अस्तित्वबोध तथा उसका सापेक्ष मैं-बोध का उत्पन्न होना संभव नहीं है। आत्मा-जिसको अणुचैतन्य या अणुपुरुष भी कहते हैं, वह सगुण ब्रह्म के ही भीतर होने के कारण उन्हीं के समान प्रकृति के गुणों के अधीन है। प्रकृति के सत्त्वगुणी प्रभाव द्वारा आत्मा में अस्तित्वबोध जागता है और इस अस्तित्वबोध में ही मैंपन उत्पन्न होता है। इसलिए व्यक्तिगत 'मैं' भावनात्मक हुआ जिसका विकास अणुचैतन्य के ऊपर प्रकृति के सत्त्व गुण के प्रभाव से होता है। इसलिए मनुष्य का अस्तित्व बोध या 'मैं'-बोध और आत्मा या अणुचैतन्य एक वस्तु नहीं है। जैसे एक टुकड़ा काठ स्वयं एक वृक्ष का सापेक्ष है, वैसे ही प्रकृति के सत्त्वगुण के प्रभाव से उत्पन्न 'मैं' का बोध भी स्वयं आत्मा नहीं है, किन्तु उसका अस्तित्व अवश्य ही आत्मा पर निर्भर करता है। अणुचैतन्य के ऊपर प्रकृति के सत्त्वगुणी बंधन के फलस्वरूप बुद्धित्व का विकास होता है, इससे अणुचैतन्य में अस्तित्व बोध तथा 'मैं' का बोध जागता है। इसलिए व्यक्ति विशेष का 'मैं' उसका अणुचैतन्य नहीं है, वह उसके मन के भीतर उसी के मन का एक अंश बुद्धिमत्त्व सूक्ष्म है।

बुद्धिमत्व के ऊपर प्रकृति के रजोगुणी बंधन से अहंतत्व तथा अहंतत्व के ऊपर प्रकृति के तमोगुणी बंधन से चित्त की उत्पत्ति होती है। बुद्धिमत्व ही प्रकृति के रजोगुणी तथा तमोगुणी बंधन के कारण अहंतत्व और चित्त में परिणत होता है। भूमा मानस से सृष्ट पंचभौतिक देह में ही आत्मा या अणुचैतन्य का प्रतिफलन होता है। अणुचैतन्य के ऊपर प्रकृति के सत्त्वगुणी प्रभाव से बुद्धितत्व का विकास होता है, इसलिए बुद्धितत्व या मैंपन का बोध स्थूल देह का सापेक्ष है। स्थूल देह के प्रत्येक अणु-परमाणु में मैंपन का बोध व्याप्त रहता है, इसीलिए मनुष्य अपनी देह के प्रत्येक अंग को 'मैं' का बोध समझता है, किन्तु पहले ही समझाया जा चुका है कि यह 'मैं' का बोध और स्थूल देह एक वस्तु नहीं है। मैं का बोध हुआ बुद्धितत्व और स्थूल देह है उसी के रहने का आश्रय या आधार विशेष।

डॉ. के.के. अग्रवाल

विरोध का तरीका और हमारी सोच

प्राचीन काल से ही लोग न्याय के लिए संघर्ष करते रहे हैं। यह अलग बात है कि हर युग में या हर व्यक्ति विशेष के संदर्भ में संघर्ष का तरीका भिन्न रहा। जैसे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के संघर्ष को ही लें। अंग्रेजों के खिलाफ लंबी लड़ाई लड़ने वाले इस महापुरुष ने सत्य और अहिंसा का मार्ग अपनाया। सत्याग्रह को अपना हथियार बनाया।

सत्याग्रह की वैदिक संकल्पना पर गौर करें, तो यह सत्य, अहिंसा और तपस्या का मेल है। यहां सत्य का आशय खुलेपन, ईमानदारी और दूसरे के विचारों को सत्य समझने से भी है। अहिंसा का अर्थ शत्रुओं से वैसा ही प्रेमपूर्वक व्यवहार करने से है, जैसा हम अपनों से करते हैं। तपस्या त्याग या बलिदान की इच्छा का प्रतीक है। एक सत्याग्रही सत्य और न्याय के लिए लड़ता अवश्य है और उसका लक्ष्य सिर्फ इनकी प्राप्ति होती है, पर उसका मकसद सिर्फ विरोधी पर विजय पाना नहीं होता। महात्मा गांधी ने खुद भी सत्याग्रह को सत्य के लिए किया जाने वाला दृढ़तापूर्ण आग्रह कहा है। इसी युग में और भी स्वतंत्रता सेनानी हुए और उन्होंने विरोध करने से भिन्न-भिन्न रास्तों का अनुसरण किया। राजगुरु, चंद्रशेखर आजाद और भगत सिंह जैसे लोग भी थे, जिन्होंने हिंसा का उत्तर हिंसा से दिया। विरोध का कौन सा तरीका उचित है, यह सबसे ज्यादा निर्भर करता है व्यक्तिगत सोच पर। ऐसा नहीं है कि राजगुरु, चंद्रशेखर और भगत सिंह के तौर-तरीकों को सभी लोग अनुचित ही मानते हैं। विरोध के किसी भी तरीके को लेकर अलग-अलग लोगों का मत, अलग हो सकता है। कभी किसी का विरोध सकारात्मक हो सकता है, तो किसी का विरोध नकारात्मक भी हो सकता है। नकारात्मक विरोध की एक मिसाल जिन्ना ने पेश की, जिन्होंने अपना मत साबित करने के लिए देश का विभाजन ही करा दिया। वहीं अम्बेडकर ने पिछड़ों के लिए जिस रिजर्वेशन की मांग की, वह मौजूदा नीतियों के उनके विरोध का हिस्सा था, पर था तो यह सकारात्मक। बहरहाल, विरोध तो श्रीकृष्ण भी करते थे। कभी विरोधस्वरूप वे छिप जाते थे, तो कभी अपनों से ही रूठ जाते थे। लोग उनके भावों से समझ जाते थे कि वे नाराज हैं। लेकिन इस युग में ऐसा विरोध निरर्थक लगने लगा है। अर्थात् आप नाराज हैं, तो सामान्य नाराजगी से यह आशय नहीं निकाला जाता कि आप किसी बात का विरोध कर रहे हैं। लोगों को ऐसा लगता है कि जब तक काम ठप न करो, सड़कों पर धरना-प्रदर्शन नहीं करो, तो तुम्हारा विरोध निष्प्रयोजन है। विरोध का एक तरीका है हड़ताल। हड़ताल एक प्रकार से सत्याग्रह का नया और थोड़ा कठिन रूप है। हालांकि ऐसे उदाहरण हैं, जहां हड़ताल को सकारात्मक विरोध का प्रतीक माना जा सकता है। जैसे, महात्मा गांधी ने हड़ताल रूपी अस्त्र का इस्तेमाल स्वदेशी जागरण के लिए किया, तो जापानियों ने हड़ताल के नाम पर उत्पादन ही दोगुना कर दिया। पर हर जगह हड़ताल का यह स्वरूप नहीं रहता। हड़ताल में न सिर्फ काम का बहिष्कार किया जाता है, बल्कि मूलभूत सेवाएं भी ठप हो जाती हैं। यह भी देखा गया है कि जिन हड़तालों का बुरा असर समाज के लिए उपयोगी सेवाओं पर पड़ता है, तो प्रायः ऐसी हड़तालें असफल हो जाती हैं। हड़ताल पर उसमें भाग लेने वालों के स्वभाव का असर भी पड़ता है। श्रीमद्भगव द्गीता में स्वभाव के तीन प्रकार बताए गए हैं: राजसिक, तामसिक और सात्विक। हड़ताल में भाग लेने वाले नेता के गुणों और हड़तालियों की सामूहिक चेतना, दोनों ही उनके स्वभाव से तय होती है। हड़ताल का सात्विक मार्ग वह है, जहां शांतिपूर्ण प्रदर्शन, भूख हड़ताल, समाचारपत्रों में विज्ञापन, पैम्पलेट, बैनर व मानव श्रृंखला आदि की सहायता से विरोध जताया जाता है। राजसिक स्वभाव के लोग हड़ताल के दौरान नारेबाजी करते हैं और सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान पहुंचाते हैं। जबकि विरोध जताने का तामसिक मार्ग अपनाने वाले हड़ताली, लोगों को बंधक बनाते हैं और चक्का जाम करते हैं। विरोधियों की हत्या करना, हिंसा करना या फिर आत्महत्या करना- ये सभी तामसिक प्रवृत्ति के लक्षण हैं।

(लेखक मूलचंद अस्पताल में सीनियर कंसलटेंट और हार्ट केयर फाउंडेशन के अध्यक्ष हैं।)

पराविज्ञान

पुखराज सेठिया

लोकदेवता बाबा रामदेव की साधना स्थली रामदेवरा

राजस्थान की धरती पर हर अंचल के अपने मेले और उत्सव हैं। आंचलिक संस्कृति के रंगों में सजा रामदेवरा मेला आज एक पर्यटन आकर्षण बन चुका है।

भारतीय संस्कृति में लोक देवताओं का अपना प्रमुख स्थान है। राजस्थान के पांच लोक देवताओं में गोगाजी चौहान, पाबूजी राठोड़, हरबूजी सांखला और मेहाजी भांगलिया के साथ बाबा रामदेव तंवर प्रमुख लोकदेवता के रूप में पूजे जाते हैं। साम्प्रदायिक सद्‌भाव के प्रणेता, अछूतोद्धार में अग्रणी बाबा रामदेवजी की साधना-स्थली-रामदेवरा आज देश के लाखों नहीं करोड़ों की श्रद्धास्थली है।

बाबा रामदेवजी का प्रादुर्भाव पन्द्रहवीं शताब्दी में तंवर वंशीय क्षत्रिय अजमलजी के घर हुआ था। इनकी माता का नाम मैणादे था। प्रचलित लोक मान्यता के अनुसार कृष्ण सं. 1459 की भाद्र शुक्ला द्वितीया को वे अवतरित हुए और संवत 1492 की भाद्र शुक्ला एकादशी को उन्होंने जीवित समाधि ग्रहण की। एक अन्य मान्यता के अनुसार सं. 1468 को माघ शुक्ला द्वितीय को वे अवतरित हुए और सं 1501 में माघ शुक्ला एकादशी को उन्होंने समाधि ली। ऐसा भी माना जाता है कि कुंतीपुत्र पांडव अर्जुन की 72वीं पीढ़ी के रूप में रामदेव का जन्म हुआ था। उनके कुछ भक्त उन्हें द्वारकाधीश कृष्ण का अवतार मानते हैं।

बाबा रामदेव अलौकिक व्यक्तित्व के धनी थे। उनके जीवन में कई ऐसी चमत्कारिक घटनाएं हुईं, जिनके कारण वे अपने जीवनकाल में ही देवता के रूप में प्रतिष्ठित हो गए। बाबा रामदेवजी की कीर्ति राजस्थान से होते हुए देश के बाहर भी फैल रही थी। ऐसे में मक्का के पांच पीर उनकी परीक्षा लेने जब पोकरण (जैसलमेर) के निकट पहुंचे, तब बाबा रामदेव ने एक चमत्कार दिखाया, जिससे उन पांचों मुसलमान संतों ने बाबा रामदेव का सिजदा किया। तभी से बाबा रामदेव की मुसलमान लोग 'रामदेव पीर' के रूप में पूजा करने लगे।

बाबा रामदेव का विवाह अमरकोट (पाकिस्तान) के तत्कालीन राजा दलजी सोढ़ा की अपंग पुत्री नेतल के साथ हुआ। कहा जाता है कि विवाह की बेदी पर रामदेव की अलौकिक शक्ति से नेतल की अपंगता दूर हो गई। बाबा रामदेव के जीवनकाल में हुई चमत्कारिक घटनाओं में प्रमुख हैं-जन्म लेते ही भवन में कुंकुम पैरों के निशान बन गए, भांजे को जिंदा कर देना, डबूती नाव को बचा लेना, मिश्री को नमक में बदल देना, उफनते (उबलते) दूध को शांत कर देना आदि।

जब बाबा ने जीवित समाधि लेने की बात कही तो उनकी भक्त अछूत कन्या डालीबाई को अपने से एक दिन पूर्व ही समाधि लेने की स्वीकृति देकर सम्मान प्रदान किया। डालीबाई की समाधि बाबा की समाधि के पास ही बनी है। रामदेवरा में बाबा रामदेव की समाधि के अतिरिक्त यहां मैणादे, दादा रणसी, रावल मालदेव, बालीनाथ, जम्माजी, हरबूजी, मेवाजी मांगलिया, बायंतो सेठ, अजमल तथा वीरमदेव आदि की भी समाधियां बनी हुई हैं रामदेवरा गांव में जिस स्थान पर उनकी समाधि है, वहीं बीकानेर के महाराजा गंगासिंहजी द्वारा बनवाया गया सुंदर मंदिर भी है।

बाबा रामदेव की स्मृति में भाद्र एवं माघ मास में शानदार मेला लगता है। मेले में बाबा रामदेवजी का लकड़ी का घोड़ा लोग बड़ी श्रद्धा से खरीदते हैं। ये घोड़े छोटे-बड़े अनेक प्रकार के मिलते हैं और कपड़ा एवं गोटे की किनारी से सजे होते हैं। लोग उन्हें रामदेवजी के घोड़े के प्रतीक के रूप में खरीद कर घर ले जाते हैं और अपने घरों को सजाते हैं। कहा जाता है कि बाबा रामदेवजी की तरह उनका घोड़ा भी कम चमत्कारी नहीं था। जनश्रुति है कि एक बार जोधपुर में हरजी भाटी लकड़ी के घोड़े के साथ बाबा का गुणगान कर रहे थे उन्हें घोड़े सहित गिरफ्तार कर लिया गया। उन दिनों जोधपुर के कुछ भागों में अकाल पड़ा हुआ था। राजा द्वारा अनाज और जल इकट्ठा करके अकालग्रस्त स्थानों पर पहुंचाया जा रहा था। हरजी भाटी ने कहा कि यह घोड़ा भी वह काम कर सकता है जो सचमुच का घोड़ा करता है। इस पर राजा ने व्यंग्य किया कि अपने इस घोड़े से भंडार में इकट्ठा किया राशन-पानी अकालग्रस्त क्षेत्रों में पहुंचा दो। हरजी ने राजा की चुनौती स्वीकार कर ली। इसके बाद उन्हें घोड़े सहित भंडार में बंद कर दिया गया। सुबह यह देखकर राजा को आश्चर्य का ठिकाना न रहा कि सारा का सारा गोदाम खाली पड़ा है। इस घटना के बाद बाबा रामदेवजी के अनुयायियों ने भी घोड़े की पूजा शुरू कर दी।

कालान्तर में गांव-गांव और नगर-कस्बों में, यहां तक कि ढाणियों में भी बाबा के मंदिर, देवरे एवं चौतरे बने। उनकी कर्मस्थली रुणेचा, जिसे आज रामदेवरा के रूप में जाना जाता है दुनिया भर के श्रद्धालुओं का केन्द्र बन गई है। उनकी समाधि पर बने भव्य चौतरे के साथ ही उनके द्वारा खुदवाया गया पवित्र रामसरोवर लाखों लोगों की श्रद्धा का केन्द्र है। वहां पर बनी पवित्र बावड़ी के जल का आचमन करते हैं। लोगों का विश्वास है कि इससे रोग एवं व्याधियों से मुक्ति मिल जाती है।

राजस्थान की धरती पर हर अंचल के अपने मेले और उत्सव हैं। आंचलिक संस्कृति के रंगों में सजा रामदेवरा मेला आज एक पर्यटन आकर्षण बन चुका है। प्रायः सैलानी इस मेले को 'विलेज टूरिज्म' का हिस्सा बनाते हैं। यहां उन्हें स्थानीय हस्तशिल्प खरीदने का अवसर भी मिलता है।

कैसे जाएं- रामदेवरा रेल और सड़क दोनों मार्गों से जुड़ा है। जैसलमेर से करीब 125 कि.मी. तथा पोकरण से करीब 20 कि.मी. की दूरी पर स्थित इस धार्मिक स्थल के दर्शनार्थ लोगों की आस्था इतनी प्रबल है कि वे दो-ढाई सौ कि.मी. की पैदल यात्रा करके यहां आने में अपने को धन्य समझते हैं।

Ganesha, most popular deity

Ramnath Narayanswamy

There is strictly speaking no such religion as Hinduism. Hindus claim their traditions from Sanatana Dharma or the eternal religion.

This spiritual tradition is deeply and profoundly symbolic. Our traditions speak of three hundred and thirty gods and goddesses but this merely affirms the truth that the forms are multiple but the reality is only one. That the supreme being can be worshipped in any form is central to Sanatana Dharma.

Lord Ganesha is easily the most widely worshipped deity of the Hindu pantheon. He is the Lord of all beginnings. The first prayer is to him. He is the Lord of all scribes. He was the scribe of the famous Mahabharata. He is the Remover of Obstacles. He is otherwise known Vijneshwara (eliminates difficulties), Ganapathi (Lord of the Ganas), Vinayaka (the most reputed leader), Gajaanana (elephant faced), Lambodara (pot-bellied) and Ekdanta (he with a single tusk). Before embarking on any important activity, invoking Lord Ganesha's blessings is highly recommended.

His large head represents wisdom, discrimination and understanding. Elder son of Lord Shiva, (the younger son is known as Karthikeya), he has two wives called Siddhi (success) and Ridhi (prosperity). He is the patron of letters.

His large ears indicate the powers of listening attentively. The small eyes point to concentration. The big head refers to big ideas and the need to think big. The axe is the weapon to cut needless attachments. The rope pulls you to the noble goal of self realization. The small mouth is a signal to be prudent in speech. The short legs demonstrate patience.

The trunk denotes adaptability and flexibility. His four arms depict the control over the mind, happiness, restraining the indriyas and divine blessings respectively. The large stomach represents his capacity to digest all duality: good and bad. The modak represents the fruits of spiritual practice and the mouse represents restlessness caused by desire and the need to bring it under control.

Ganesh Chaturthi is celebrated as the birthday of Lord Ganesha. He is the presiding deity of consciousness and inner awakening. The significance of this sacred festival lies in bringing inner reality to the fore, awaken ourselves to the divine principle present within us and make us aware of its omniscience. On this day Lord Ganesha bestows his blessings to all those who seek it. His Grace translates as wisdom, prosperity and good fortune. Obstacles are removed, way is paved for a higher consciousness to prevail.

Lord Ganesha is said to be easiest of deities to please. If he is worshipped with sincerity, love and devotion, he is reputed to immediately respond to the needs of his devotees. ■

Live life with compassion

Purnima

Compassion is not an attribute of any one religion. It is a universal principle for happiness and peace. In a world torn by conflict and strife, where violence and not love dictates people's actions, what every person, at every level, of every age needs to learn is the art of nurturing compassion within.

Be it a homemaker fulfilling the many needs of her family, an entrepreneur meeting people and clinching deals for her company, a politician passing bills in the legislature that can change the destiny of millions or a nauto rickshaw driver bargaining for higher rates with her passenger - whoever you may be, you need compassion. Compassion should no more lie in the ideologies of philosophers, or in the lucrative rewards of theologians (in the after-life). The voice of compassion needs to be heard in every household, educational institution, office, business unit, shop, mall and theatre, besides other places and circumstances.

For centuries now we have reserved compassion to be a prerogative of a chosen few, like a Christ or a Buddha. We have also conceptually dismissed the possibility of someone living and embodying such a quality in the hurly-burly of every day life. Is it so difficult to live compassionately? Or are we so incapable that we cannot raise ourselves to those standards?

Compassion begins with empathy. Empathy is the ability to feel for another. They who are sensitive to the motions of life, to the experiences of pain and pleasure are capable of empathy. They who have watched the movements of their thoughts, the burden of unnecessary thinking, and the pain of conflicting thoughts know it well. They, who have paid attention to their emotional upsurges, the unintelligent ways of anger, hurt or hate, the irrationality of fear, feel empathy for another who is going through a similar emotion. Hence, compassion begins with attention to one's own life experiences, be it physical or emotional.

Empathy and compassion thus born would naturally blossom into acts of kindness to reach out to others. Well-being of the other is the highest priority for a compassionate person; hence her actions would reflect tremendous intelligence, fortitude and discretion. It could be a dynamic plunge into action to change the adverse situation of the one who is suffering. It could also be gentle words of love and strength or a heartfelt prayer for Divine help.

Compassion is not the armour of the weak; it is the weapon of the strong. It is irresponsible to think, believe and preach that anger and violence can solve our problems. Problems at micro as well as macro level arise because of lack of understanding and love between people. Problems that are situation-based are very less compared to those that are emotions-based. Situation-based problems need better strategy and skill to solve them but emotion based problems need people who are involved in moving out of those negative emotions that are causing them. That is why any constructive change can never be effected through anger and violence. Compassion is the answer. Let us nurture the noble virtue of compassion consciously with dedication. Let us see the faces of people who walk into our world with smiles, tears, affection and wrath. Let us meditate on their feelings to let compassion blossom. ■

Relativity is everything

If our consciousness is able to tear away from the limits of time and space, then there would be no past, no future, it would all be the present and the present alone. Only the consciousness which becomes infinite...

Acharya Mahaprajna

If our consciousness is able to tear away from the limits of time and space, then there would be no past, no future, it would all be the present and the present alone. Only the consciousness which becomes infinite, remains. To the enlightened, there is no past or future. They can see each event, whether it belonged to the past or is yet to happen, with tremendous clarity in the future. They can see it happening. To them there is only today, only the present. But of course it is worth reminding oneself that when there is no past or future, there is no present either. These three words lose all meaning. All that remains is the event, that which is. It does not disappear even in infinite time. Is this possible without relativity? Anything bound by time and space cannot be independent. Time and space are connected to our events. This is so because no event can be explained without time and space.

Day and night cannot be identified without the concept of relativity. When the earth was thought of as flat then there emerged the idea of up and down. But now that we know that the earth is round, where does the idea of up or down make sense without the idea of relativity.

The teacher told the student, "Shorten the line drawn on the blackboard without erasing any part of it." Now, how is it possible to make it short and yet not rub a part of it? The student was intelligent. He drew a longer line, thus making the original line appear shorter. It has been said that Gods live for millions and billions of years. This is surprising and yet not so. Let us not forget relativity. Those who are beyond the effects of gravity are beyond time. A thousand years here would not even be like a second there.

In the Jain agamas there is a passage that reads:

A man died and went to heaven. He thought of going back to earth to meet his family and began making preparation. All the Gods asked him where he was going. He replied, "I am going back to the world of mortals to meet my family." They replied, "Oh! You have just come, wait a while. See the fantasies of this place." He tarries, thinks for a second and comes straight to earth. He searches for his father, mother, brother, sister and friends. He enquires about them from people. Nobody is able to tell him anything. Many thousands of years seemed to have passed. Many generations had gone past. He thinks everything was but a minute ago! But on earth, a lot of time had passed. ■

Changing yourself

Jaggi Vasudev

Politicians did not come and fall upon us either from heaven or hell, they are just one of us.

They are not made in heaven or hell. If a situation crops up, one of us will stand up as a politician, isn't it?

Even if one of us become the leader of this country tomorrow, we will be doing the same things that they are doing, or probably worse, because that is the kind of system we have set up. We have that kind of leaders because that is what we deserve.

If we want to have better leaders, we must make ourselves deserving, that we do not play petty politics in the small arena of day-to-day life. If all of us develop a certain sense of integrity, can the leader afford to continue the way he is? No. So you can transform them only if you transform yourself.

Without individual transformation there will never be universal transformation; a basic change in consciousness needs to happen. Trying to change social, national or global realities without working on human consciousness means there is no serious intention. If people are genuine about their interest in transformation, they need to understand that it has to start with themselves, there is simply no other way.

So should we wait for the population of the whole country to transform themselves before the leaders transform themselves? No. That is not what I am saying. But without that intention in you, without that intention in the people, we cannot demand that from our leader, isn't it? For example, suppose a minister comes to the local village, the village people are only talking about something for their community, it does not matter what happens to another community; that is the attitude. So there is corruption and division in the very way you think and feel and understand life. How can our leaders be free from that? The leaders are trying to please the people because this is a democracy.

They have to keep the people pleased all the time otherwise they will not get elected. So people's likes must change if our leadership has to change. So wherever we are, whatever little activity we are doing, if we show some sense of unprejudiced leadership which is for everybody's wellbeing around us on a day-to-day basis, on a moment-to-moment basis in our life, then we will throw up good leaders. ■

सीताराम गुप्ता

एक उपचार-प्रक्रिया ही तो है क्षमा

शत्रु शब्द का अस्तित्व वास्तव में 'क्षमा' के अभाव में ही है। जहां क्षमा है वहां शत्रुता अथवा द्वेष का क्या काम? क्षमा दुश्मनी का विनाश कर दोस्ती का विस्तार करती है इसलिए जैन धर्म में तो इसे एक पर्व के रूप में मनाया जाता है।

अन्य सकारात्मक गुणों की तरह क्षमा के महत्व पर भी हर धर्म में प्रकाश डाला गया है। कहने को तो यह एक छोटा सा शब्द है 'क्षमा' लेकिन इसका प्रभाव छोटा नहीं होता। किसी को क्षमा करने का अर्थ है उसके प्रति अपने मनोभावों में परिवर्तन। जब भी किसी के प्रति शिकायत, क्रोध, विद्वेष, ईर्ष्या या विषमता का भाव होता है तो जिसके मन में ये भाव होते हैं वह इन घातक मनोभावों की पीड़ा के प्रभाव को भुगतने के लिए विवश होता है। किसी को क्षमा करने के पश्चात् ये घातक मनोभाव समाप्त हो जाते हैं। अत: क्षमा करने वाला व्यक्ति अत्यंत घातक विकारों की पीड़ा से मुक्त हो जाता है। क्रोध, घृणा, वैमनस्य आदि मनोभावों के स्थान पर शांति, प्रेम, मित्रता, सहयोग, सौहार्द, सौमनस्य आदि भावों का उदय होने से व्यक्ति निरर्थक तनाव और दुश्चिंताओं से बच जाता है। तनाव आज के युग का एक सर्वाधिक घातक रोग है। तनावमुक्त व्यक्ति की स्वाभाविक रोगोपचारक शक्ति बनी रहती है। तनावयुक्त व्यक्ति का इम्यून सिस्टम धीरे-धीरे कमजोर होकर उसे रोगी बना डालता है। किसी को क्षमा करने का सीधा सा अर्थ है स्वयं को स्वस्थ एवं निरोग बनाए रखना। अनेक अध्ययन एवं वैज्ञानिक शोध इस बात की पुष्टि करते हैं कि जो व्यक्ति जितना अधिक क्षमाशील होता है वह उतना ही अधिक स्वस्थ होता है और रोगी होने पर शीघ्र रोगमुक्त हो जाता है।

हमारे संबंधों में चाहे वे व्यक्तिगत या पारिवारिक हों अथवा सामाजिक, राजनीतिक, व्यावसायिक या आर्थिक सुधार न होने या न सुधरने का प्रमुख कारण है क्षमा का अभाव। बिगड़े संबंधों में सुधार का अर्थ है कहीं न कहीं क्षमा भाव ने अपना कार्य किया है। कहीं न कहीं से क्षमा की शुरुआत हुई है। संबंधों में सुधार का अर्थ है उपचार। सामाजिक अथवा आर्थिक समस्याओं का उपचार ही नहीं अपितु मानसिक एवं भौतिक व्याधियों का उपचार भी। सभी प्रकार के उपचार अन्तत: भौतिक व्याधियों के उपचार में ही सहायक होते हैं। इस प्रकार क्षमा वास्तव में उपचार का साधन है। जिसने क्षमा करना सीख लिया उसने अनेक व्याधियों पर नियंत्रण करना भी सीख लिया। रोगमुक्त होकर स्वस्थ जीवन जीने के लिए एक वरदान है ''क्षमा।''

प्रश्न उठता है कि क्या क्षमा देना ही महत्वपूर्ण है क्षमा मांगना नहीं? वस्तुत: क्षमा देना और क्षमा मांगना दोनों ही महत्त्वपूर्ण हैं। क्षमा मांगने का अर्थ है अपने मिथ्या अहंकार से मुक्त होना। जो व्यक्ति जितना अधिक अहंकारी होता है वह क्षमा से उतना ही दूर होता है। न क्षमा मांग सकता है और न क्षमा कर सकता है। क्षमा मांगने वाले और क्षमा करने वाले दोनों के अहंकार का नाश होना निश्चित है। अहंकार स्वयं में एक विकट व्याधि है। क्षमा द्वारा इस विकट व्याधि से मुक्त होकर स्वस्थ जीवन जी सकते हैं। पर क्या क्षमा मांगना और क्षमा करना इतना सरल है? वस्तुत: यह इतना आसान नहीं लेकिन असंभव तो बिल्कुल नहीं। क्षमा मांगने वाला और क्षमा करने वाला दोनों ही बड़े माने जाते हैं। जिसने क्षमा देना सीख लिया वह बहुत बड़ा वीर है। 'क्षमा वीरस्य भूषणम्।' बहादुर ही क्षमा नामक आभूषण को धारण कर सकते हैं। यहां बहादुरी से तात्पर्य बाहुबल से नहीं है अपितु मन की शक्ति से है। सकारात्मक मानसिक दृष्टिकोण से है। जो अपने मन को वश में कर अपनी इंद्रियों पर नियंत्रण कर सकता है वही आत्मज्ञान को प्राप्त हो सकता है। आत्मज्ञान प्राप्त होने पर ही व्यक्ति मिथ्या अहंकार और दूसरे घातक मनोभावों से मुक्त होकर दूसरों को क्षमा कर सकता है, अथवा क्षमा-याचना कर सकता है। वस्तुत: 'क्षमा' एक ऐसी प्रक्रिया है जो व्यक्ति को आत्मज्ञान का अवसर प्रदान करती है। क्षमा द्वारा सही अर्थों में व्यक्ति का आध्यात्मिक उत्थान संभव है। क्षमा वीरों का आभूषण है यह सही है लेकिन कमजोर व्यक्ति के लिए भी क्षमा का कम महत्व नहीं है। महाभारतकार का कथन है:

क्षमा गुणो ह्यशक्तानां शक्तानां भूषण क्षमा।

क्षमा शक्तिहीन का गुण है और शक्तिशाली का आभूषण है। क्षमा एक ऐसा भाव या गुण है जिस से हर व्यक्ति निश्चित रूप से लाभान्वित होता ही है। आम लोगों की सोच है कि क्षमा कमजोरी का प्रतीक है क्रोध और हिंसा में ताकत दिखलाई पड़ती है लेकिन वास्तविक ताकत वहीं है जहां क्षमा का भाव है। बदले की भावना या घृणा हिंसा उत्पन्न करती है जबकि क्षमा में निहित है अहिंसा का भाव। अहिंसा द्वारा ही सात्विक व स्थायी परिवर्तन संभव है। क्षमा द्वारा अहिंसा का अनुपालन होता है जो योगमय जीवन का प्रारंभ है। योग के आठ अंगों में पहला अंग है 'यम' और 'यम' का पहला सूत्र है 'अहिंसा'। क्षमा योग का ही प्रारंभ नहीं अपितु धर्म का भी प्रमुख लक्षण है।

'क्षमा' धर्म के दस लक्षणें में से एक है। भगवान बाहुबली या महावीर इसलिए बाहुबली या महावीर कहलाए क्योंकि उन्होंने क्षमा को जीवन का अनिवार्य तत्व स्वीकार कर जीवन में अपनाया। उनके बतलाए हुए मार्ग को धर्म कहा गया क्योंकि इसमें क्षमा की प्रधानता थी। सम्राट अशोक इसलिए महान नहीं कहलाए कि उन्होंने कलिंगयुद्ध में विजय प्राप्त की अपितु ऐसे धर्म की शरण में चले गए जिसमें क्षमा की प्रधानता थी। ईसामसीह ने उन लोगों को भी क्षमा कर दिया जिन्होंने ईसामसीह को सूली पर टांग दिया और ईसामसीह प्रभु बन गए। उनके द्वारा दिखलाया गया मार्ग एक नया धर्म बन गया।

क्षमा कब करें? मांगने पर या बिना मांगे? यदि कोई व्यक्ति क्षमा मांगता है तो क्षमा न करना अपराध जैसी स्थिति हो जाती है। क्षमा मांगने पर मांगने वाला अपनी गलती को स्वीकार कर अपराधबोध से मुक्त हो जाता है लेकिन क्षमा न करने वाला उसकी पीड़ा से सुलगता रहता है। अत: किसी के क्षमा मांगने पर क्षमा कर देना ही एक उपयोगी क्षण है।

–ए.डी. 106-सी, पीतमपुरा, दिल्ली-110034

समृद्ध सुखी परिवार

सुखी और समृद्ध परिवार का मुखपत्र

विज्ञापन और सदस्य बनाने हेतु प्रतिनिधि संपर्क करें

पत्रिका के स्वयं ग्राहक बनें, परिचितों, मित्रों को ग्राहक बनने के लिए प्रेरित करें

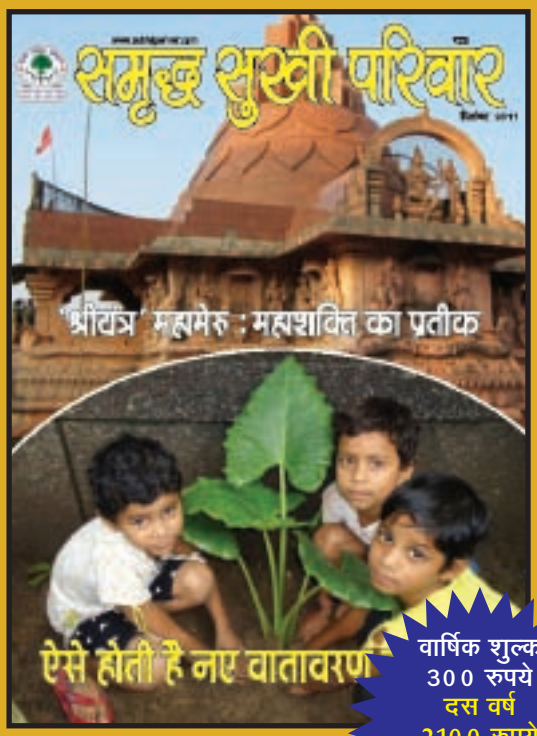

वार्षिक शुल्क
300 रुपये
दस वर्ष
2100 रुपये
आजीवन
3100 रुपये

कवर अंतिम पृष्ठ	25,000
कवर द्वितीय/तृतीय	20,000
भीतरी रंगीन पृष्ठ	10,000

विज्ञापन देकर अपने प्रतिष्ठान को जन–जन तक पहुंचाएं

कृपया निम्नलिखित विवरण के अनुसार मुझे 'समृद्ध सुखी परिवार' सदस्यता सूची में शामिल करें:

नाम.....

पता.....

.....

फोन..... ई–मेल.....

सदस्यता अवधि.....राशि रुपए..... द्वारा मनीऑर्डर/बैंक ड्राफ्ट संख्या.....

दिनांक..... .....

आवेदक के हस्ताक्षर

नोट: सदस्यता शुल्क की राशि का चेक/ड्राफ्ट **सुखी परिवार फाउंडेशन, नई दिल्ली** के नाम से बनाएं या एक्सिस बैंक खाता संख्या 119010100184519 में सीधा जमा करवाएं। मनी ट्रान्सफर के लिए **IFS CODE UTIB0000119** का प्रयोग करें।

सुखी परिवार फाउंडेशन

टीएसडब्ल्यू सेंटर, ए–41/ए, रोड नंबर–1, महिपालपुर चौक, नई दिल्ली–110 037

फोन: +91–11–26782036, 26782037, मोबाइल: 09811051133

ललित गर्ग

अनेकांत: सहअस्तित्व का दार्शनिक दृष्टिकोण

सत् और असत् के विषय में दार्शनिक जगत में बहुत मंथन हुआ है। जैनदर्शन में अनेकांत के माध्यम से सत्य की खोज और साक्षात्कार का मार्ग सबके लिए खोल दिया है। अनेकांत जैनदर्शन का एक विशिष्ट सिद्धांत है। आचार्य श्री महाप्रज्ञ ने इस सिद्धांत को सहज और सरल तरीके से व्यक्त कर जनग्राह्य बना दिया है। आचार्य महाप्रज्ञ की 'अनेकांत : सहअस्तित्व का दार्शनिक दृष्टिकोण' एक ऐसी कृति है जो आम व्यक्ति के सामने आगमिक धरातल पर ऐसे छोटे-छोटे आदर्शों और जीवन मूल्यों को अनेकांत के संदर्भ में प्रस्तुत किया है जिससे सफल एवं शांत जीवन जीने के सूत्रों को हृदयंगम किया जा सकता है। वर्तमान के उलझन भरे युग में यह कृति अनेकांत का एक ऐसा आलोक फैलाती है जिसकी रोशनी में समन्वय, सौहार्द एवं सहअस्तित्व को जीवंत किया जा सकता है। यह कृति अनेकांत के द्वारा अहिंसा, सत्य आदि का व्यक्ति और समाज के संदर्भ में विश्लेषण करती है। यह जैन तत्व के अनेक पहलू जैसे अनेकांत, नयवाद, द्वैत व अद्वैतवाद, प्रत्ययवाद, वस्तुवाद आदि का सहज, सरल एवं संक्षिप्त शैली में विवेचन करती है।

यह पुस्तक अनेकांत दर्शन के संबंध में महत्वपूर्ण जानकारियां प्रदत्त करती है। लेखक ने आध्यात्मिक और वैज्ञानिक दो धाराओं को जोड़ने का जो प्रयत्न किया है, वह नि:संदेह भारत के आध्यात्मिक एवं दार्शनिक चिंतन के क्षितिज पर एक नया सूर्य उगाएगा। आज मूल्यांकन का हर पैमाना वैज्ञानिक है। इस परिप्रेक्ष्य में विज्ञान को अध्यात्म से जोड़ने का सशक्त प्रयास वास्तव में स्तुत्य है, दूरदर्शिता का परिचायक है और वर्तमान में अनुकूल है। यह कृति हर वर्ग के पाठक को अभिभूत और चमत्कृत करने में सक्षम है।

समानता, विषमता, गरीबी, अमीरी, भ्रष्टाचार, राजनीतिक विसंगतियां, पर्यावरण प्रदूषण, आतंकवाद, हिंसा आदि समस्याएं हैं- इनका अनेकांत दृष्टि से समीक्षात्मक आलोचन करना आवश्यक है। भाषा, प्रांत, स्वायत्तता, जातीयता, साम्प्रदायिक कट्टरता आदि राष्ट्रीय प्रमुख समस्या हैं। ये और ऐसी ही अनेक समस्याओं का समाधान इसलिए नहीं हो रहा है कि समस्या सुलझाने वालों का दृष्टिकोण सापेक्ष और समन्वयमूलक नहीं है। व्यावहारिक चेतना का निर्माण करने से पहले दार्शनिक चेतना का निर्माण आवश्यक है और इस दृष्टि से यह कृति महत्वपूर्ण भूमिका निर्मित करती है।

दार्शनिक विषयक होने के बावजूद पूरी पुस्तक के पठन क्रम में आद्योपांत रोचकता और सरसता का अनुभव तो होता ही है, साथ-ही-साथ कुछ विषयेत्तर ज्ञानवर्द्धन कराने वाले तथ्यों की सुपष्ट जानकारी भी प्राप्त होती है। पुस्तक के वाक्य छोटे-छोटे पर बिहारी के दोहे की तरह 'घाव करें गंभीर' वाली उक्ति को चरितार्थ करते हैं। वे वाक्य पूर्णतया विषय प्रतिपादन में अतीव सक्षम और समर्थ हैं। प्रतीत होता है कि जैसे शब्दों का सुनियोजन माप-तौल कर किया गया है। विषय प्रतिपादन की विशिष्ट शैली, शब्द-चयन, वाक्य में शब्दों का संगुम्फन, वाक्य-संरचना आदि कृतिकार के विलक्षण प्रतिभा और ज्ञान के परिचायक हैं। निश्चित ही इस कृति के विचार बौद्धिक और दार्शनिक स्तर पर ही नहीं अनुभूति के स्तर पर प्रस्तुत हुए हैं। इसलिए यह और अधिक मूल्यवान कृति बन गयी है।

पुस्तक : अनेकांत: सहअस्तित्त्व का दार्शनिक दृष्टिकोण
लेखक : आचार्य महाप्रज्ञ
प्रकाशक : जैन विश्वभारती, लाडनूं-341306 (राज.)
मूल्य : रु. 70, पृष्ठ सं. : 116

माटी के पत्र-पुष्प

बरुण कुमार सिंह

पांच खण्डों में विभाजित कृति 'माटी के पत्र-पुष्प' में- 'अर्चन-वंदन', 'आत्म-निरुपण', 'जीवन-दर्शन', 'पर्व, पर्यावरण एवं ऋतु-संवेदन', 'नारी सशक्तिकरण एवं स्फुट विषय' कवि मन के अनेक भाव रंगों का जीवंत चित्रांकन है।

कृति में मुख्य रूप से हैं- प्राण-प्यार वतन, कहो गर्व से, कैसा तेरा सत्कार करूं, प्रिय! मिलन तुम्हारा यह कैसा?, चिंताएं मिली है दहेज में, मेरी प्यास बुझाये कौन, मानव-मन विज्ञान जटिल है, छांव छूना पाप लगता, दुकान लगाये बैठा हूं, माटी असली है, भीतर से हम मरे-मरे हैं, सब पड़े रहे सिरहाने में, भैंस के आगे बीन बने, दीपक ने संकल्प लिया है, जंजीरों के गांव, लाश अपनी आदमी ढोने लगा, अब बरसात लगी कतराने, मेहंदीवाला हाथ तुम्हारा, ऐसा-वैसा क्यों लिख डाला आदि शीर्षक अनेक कविताएं मन को छूने वाली है।

कवि की सहज बिम्बधर्मिता, लयप्रवाही चेतना और भाषिक सृजनात्मकता के साथ भाव और विवेक की गहन सांद्रता रचना के क्षणों को अप्रतिम कर देने वाले समर्थ तत्व हैं। लेखक शिवशरण दुबे का यह काव्य संकलन उनकी कवि संभावनाओं को प्रकट करता है। ऋतु और प्रकृति के विभिन्न रंगों और उनकी हलचलों का इंद्रिय संवेद्य पाठकीय संलग्नता प्रदान करने वाला है।

पुस्तक : माटी के पत्र-पुष्प
लेखक : शिवशरण दुबे
प्रकाशक : उद्योग नगर प्रकाशन
695, न्यू कोट गांव, जी.टी.
रोड, गाजियाबाद-201001 (उ.प्र.)
मूल्य : रु. 150, पृष्ठ सं. : 144

थोड़ा सा सुख

कविता ही वह विधा है जो जन-जन के मानस पटल पर अपना गहरा प्रभाव डालने में सक्षम होती है। सरोजनी 'सरोज' की यह पुस्तक 'थोड़ा सा सुख' छोटी-छोटी कविताओं का एक संग्रह है। मानों छोटे-छोटे तिनकों से एक घोंसला बनाया है। कविताएं जितनी छोटी है सार और शब्द वाकई तारीफ के काबिल है। लेखिका ने स्त्री के चरित्र को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत किया है। लेखिका ने मां, पुत्र, पिता और परिवार को इन कविताओं में आत्मीय अभिव्यक्ति दी है।

कविताएं पढ़ने के बाद ऐसा लगता है कि नारी प्रकृति का वरदान है जिसे इंसान ने अपनी जरूरत के लिए बड़ी होशियारी से इस्तेमाल किया है। ये कविताएं बताती हैं कि अगर किसी को इस दुनिया में वास्तव में सुख खोजना है तो उसे अपने अंदर बहुत गहराई में जाना होगा क्योंकि सुख अपने अंदर ही है। खुश रहकर दूसरों को खुश करना व इसी खुशी में दर्द को सहना है।

'थोड़ा सा सुख' में नारी जीवन से पहलुओं पर 80 कविताएं हैं। इन कविताओं में बेटी, वंशधर या विषधर, दर्दे बयां, नारी के आंसू, नारी तुम श्रद्धा हो, बेटी का जन्म, आज की नारी, समय-चक्र, प्यार की पाती, वक्ती रिश्ते, पर्यावरण, खुदगर्जी, मरने के बाद, मंजिल, विरहाग्नि, मन का रोना, जुदाई, बेवफाई, प्यार का परचम, सासू मां, दिल से आदि अनेक कविताओं के माध्यम से अपने आस-पास, अपने परिवार, परिवेश और स्वयं अपने अंतर्मन के घटना, विचार और संवेदना की खुली और सीधी अभिव्यक्ति यह संकेत करती है कि लेखिका समय के सत्य और मन की भावप्रवण संपदा को सशक्त वाणी देने में सफल है।

मानवीय संवेदनाओं की अभिव्यक्तियों को एक नई शैली में प्रस्तुति देकर उन्होंने कविता को एक नया कलेवर दिया है।

पुस्तक : थोड़ा सा सुख
लेखक : सरोजनी 'सरोज'
प्रकाशक : साहित्यागार, धामाणी मार्केट की गली, चौड़ा रास्ता, जयपुर (राजस्थान)
मूल्य : रु. 125, पृष्ठ सं. : 96

ठाकुर, तुम सरनाई आयो

उमा पाठक

नानकजी का यह भजन भक्त के पूर्ण समर्पण का द्योतक है। अधिकतर जब व्यक्ति हारने लगता है, उसे इस अंधकारमय जगत में कोई राह नहीं सूझती, तब वह उस शक्तिशाली की शरण में जाता है। वहां पहुंचने की देर है कि 'मन की संसा' निकल जाता है। पर इस संशय को उड़ाना आसान नहीं है। इसके लिए पूरी निष्ठा और विश्वास की जरूरत होती है, यह मानना जरूरी है कि 'मेरा मुझमें कुछ नहीं।' अपने से ऊंचे में लगन लगाने के लिए अपने को खोना पड़ता है।

प्रार्थना इसी लगन से जुड़ी होती है। इसमें पूर्ण समर्पण जरूरी होता है। भजन प्रार्थना का माध्यम है। जिस प्रकार मधुर संगीत वही होता है, जिसमें गायक अपने मर्म को छूने की ताकत रखता है, जो भक्त की तल्लीनता से भरा होता है।

हर युग में संतों ने संगीत-साधना की है। जो भटकते चित्त को ध्यान में आए दैवी स्तर तक पहुंचाती है। तभी तो संतों ने प्रभु से एकात्म होने के लिए संगीत को अपनाया। भक्ति भजन में व्यक्त होती है। भक्तों के भजन उनकी अंतरात्मा का वह निवेदन होते हैं, जो आम आदमी को भी भक्त के समान ही भाव-विभोर करने की क्षमता रखते हैं। यह चित्त को शांति से भर देते हैं, तभी इन्हें नादोपासना कहा जाता है। भगवान की महिमा के गान से भक्ति विकसित होती है।

कुछ लोग प्रार्थना को व्यक्ति के विश्वास से जुड़ी धारणा मानते हैं, वे भजन कीर्तन करने वालों को रूढ़ियों से बंधा मानते हैं और अपने को इस सबसे स्वतंत्र मानकर गर्व करते हैं। पर जैसे पेड़ से जन्मी डाल उससे स्वतंत्र होकर जीना चाहेगी तो सूख जायेगी, ठीक उसी तरह अपने मूल से कटकर व्यक्ति को सुख शांति कैसे मिल सकती है?

प्रार्थना का रूप या माध्यम कुछ भी हो, उस शक्ति की स्वीकृति हमें तनाव रहित करती है। जब शरीर तनावपूर्ण होता है, तो अंतर्मन भी उससे प्रभावित होता है। इससे मुक्ति का कोई बाहरी इलाज नहीं है। हमें अपने चित्त को शांत करने का उपाय अपने प्राप्त और अपने अंदर ही ढूंढना है। बस, इतना जानना जरूरी है कि चित्त जब शांत हो जाता है, जब अपने से बड़ी किसी शक्ति के सहारे का आश्वासन होता है। चित्त हमारे स्वभाव को दिशा देता है।

जब चित्त शांत होता है, तब वह ग्रहणशील होता है। मीरा की कातर पुकार, 'हरि, तुम हरो जन की मीर' उसकी पुकार बन जाती है। वह स्वीकार कर लेती है कि 'हरि को नाम सदा सुखदायी'। यह विश्वास हमारी ताकत बन जाता है। हमें लगने लगता है, वह सच ही सहारा देने को हाथ बढ़ा रहे हैं। हम उनकी इच्छा के समीप हो जाते हैं, तो जीना सहज हो जाता है। जेम्स रसेल की पंक्तियां इसी भाव की प्रेरणा देती है-

हर सुबह कुछ देर को अपनी बांह
स्वर्ग की खिड़की की चौखट पर टिकाकर
अपने भगवान को देखो।
हृदय में उस दिव्य दर्शन की झलक लिए
दिन का सामना करने की ताकत बटोर लो।।

अध्यक्षीय

मनीष जैन

योग है एक सुखद यात्रा

पश्चिमी विचारक 'स्ट्रगल इज लाइफ' को जीवन कहते हैं। उनकी सोच है जीव जब गर्भ में उतरता है तब वह संघर्ष कर अपने आपको अग्रसर करता है। यह जीवन को प्रारंभ करता है। संघर्ष ही जीवन का आदि बिन्दु है और संघर्ष करते-करते वह अपने जीवन को परिसंपन्न करता है।

संघर्ष क्यों करता है? सुख के लिए, आनन्द के लिये और शांति के लिये। सुख, आनन्द एवं शांति क्या है। केवल लक्ष्य के निर्धारण से सुख, शांति और आनंद की प्राप्ति नहीं हो जाती है। लक्ष्य के अनुरूप पुरुषार्थ भी अपेक्षित है। पुरुषार्थ के अभाव में लक्ष्य उपलब्ध नहीं होता। लक्ष्य की प्राप्ति के लिए योग जरूरी है। पंतजलि के अनुसार योग का अर्थ है मन पर नियंत्रण करना। मन और शरीर के बीच संतुलन स्थापित करने में योग एक बड़ा माध्यम है। योग एक क्रिया है जिसमें व्यक्ति का मन और शरीर एक बिन्दु पर केन्द्रित या एकाकार हो जाता है। भगवद गीता के अनुसार व्यक्ति दु:ख और सुख की दशा में समान भाव में रहे तो यह योग की स्थिति है। गीता में ऐसे व्यक्ति के लिये स्थितप्रज्ञ शब्द का प्रयोग किया गया है। यानी जब कोई सुख या दु:ख से प्रभावित हुए बिना हर परिस्थिति में एक समान मन:स्थिति में रहे तो वह योग की स्थिति है। इसके लिये व्यक्ति को नकारात्मक कार्यों से दूर रखने और पॉजिटिव सोच विकसित करने की सलाह दी गयी है।

आसन का अर्थ शरीर की मुद्राओं से है। शरीर के सौष्ठव के लिए आसन प्राणायाम आवश्यक है। आसन जहां शरीर को शक्तिशाली और सुडौल बनाता है वहां प्राणायाम से तेजस्विता बढ़ती है। आसन और प्राणायाम केवल शरीर को ठीक रखने या बीमारियों को दूर करने का ही मार्ग नहीं है अपितु शरीर के यंत्र को सम्यक् एवं प्राण को परिष्कृत करने का साधन है। आसन-प्राणायाम के सम्यक् अभ्यास से मुद्रा प्रगट होती है। मुद्रा का संबंध भावों से हैं, जिसकी भावधारा निर्मल है उसकी मुद्रा भी सुंदर बनेगी क्योंकि मुद्रा भाव से निर्मल बनती है। मुद्रा और भाव का गहरा संबंध है, इसलिए कहा गया- जैसी मुद्रा वैसा भाव, जैसा भाव वैसा स्राव, जैसा स्राव वैसा स्वभाव बन जाता है, जैसा स्वभाव वैसा व्यवहार बन जाता है। इसलिए अपनी भावधारा को निर्मल बनाने से रोग मिटता है, जीवन संतुलित होता है और व्यक्तित्व का पूर्ण विकास होता है।

योग साधना की संपूर्ण प्रक्रिया है। यम-नियम-आसन-प्राणायाम-प्रत्याहार-धारणा-ध्यान-समाधि ये आठ अंग महर्षि पतंजलि ने योग-दर्शन में विवेचित किये हैं। योग केवल चिकित्सा पद्धति नहीं है, यह स्वस्थ जीवनशैली है, जिससे व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का संपूर्ण विकास करता है। उससे परम अस्तित्व को उपलब्ध होता है। योग के नियमों के विरुद्ध जीवनशैली से न भोग का उपयोग कर सकता है और न ही स्वस्थ और शांत जीवन जी सकता है।

भोग के आकर्षण को मिटाने वाली प्रक्रिया है–योग अर्थात् इन्द्रिय चेतना को परम से जोड़ना। जिस सुख के आस्वाद के लिए इन्द्रियां तत्पर रहती हैं उनको उससे अधिक सुख की प्राप्ति-वस्तु और विषय के बिना उपलब्ध हो जाए तब वे स्वयं परम चेतना में लीन हो जाती है। जीवन को उत्तम बनाने का तात्पर्य है जीवन से जुड़ी समस्त इकाइयों का परिष्कार करना। शरीर प्रथम इकाई है। स्वस्थ शरीर से साधना में सहयोग मिलता है। शरीर को स्वस्थ रखने के लिए व्यक्ति अपनी जीवन शैली को व्यवस्थित बनाता है। व्यवस्थित जीवन शैली विकास का आधार बनती है।

शरीर अस्वस्थ क्यों होता है? तनाव को पैदा होता है, जीवन असंतुलित क्यों होता है- जीवन की इन विसंगतियों के कुछ कारण हैं–जैसे असंतुलित भोजन, योगासन एवं श्रम का अभाव, रात्रि में देर तक जागरण, निषेधात्मक चिंतन, तनावपूर्ण जीवनशैली एवं नशीले पदार्थों का सेवन

रोग जब पैदा होता है तब व्यक्ति चिंतित होता है। उसे उपशांत करने की कोशिश करता है। यह तो वैसा ही है जैसा आग लगने पर कुआं खोदना। योग शरीर को केवल यंत्र नहीं मानता। उसके भीतर चेतना का अस्तित्व स्वीकार करता है। योग व्यक्ति को समग्रता से देखता है। योग के यम, नियम, आसन, प्राणायाम द्वारा व्यवहार और शरीर प्रभावित होता है। प्रत्याहार से इन्द्रियों का नियमन कर धारण, ध्यान, समाधि द्वारा मन, भाव एवं चेतना का परिष्कार कर समस्याओं को समाहित किया जाता है।

जब व्यक्ति योग के किसी चरण का अभ्यास करता है तो उससे संपूर्ण शरीर, मन, भाव आदि प्रभावित होते हैं। जीवन में योग की नितांत अपेक्षा है। जीवन-शैली में योग जुड़ने से स्वयं का परिष्कार और समाज का भला अपने आप ही हो जाता है।

जब व्यक्ति योग के किसी चरण का अभ्यास करता है तो उससे संपूर्ण शरीर, मन, भाव आदि प्रभावित होते हैं। जीवन में योग की नितांत अपेक्षा है। जीवन-शैली में योग जुड़ने से स्वयं का परिष्कार और समाज का भला अपने आप ही हो जाता है। योग से शरीर स्वस्थ रहता है तभी व्यक्ति अन्य कार्यों को अच्छे ढंग से पूर्ण कर सकता है। चिकित्सा की दृष्टि से चेतना के विकास का यह महत्वपूर्ण साधन है। ध्यान एवं साधना के द्वारा वह उसे स्वस्थ ही नहीं रखते अपितु शरीर में रहे चैतन्य केन्द्रों को नियंत्रित एवं परिष्कृत कर सकते हैं।

मनुष्य के बीमार होने का सबसे बड़ा कारण श्वास है। आम व्यक्ति श्वांस का मूल्यांकन सामान्यत: नहीं करते हैं, जबकि श्वास जीवन के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटक है। सही श्वास लेकर मस्तिष्क के दोनों पटलों को संतुलित बना सकते हैं। सही श्वास से जीवन को स्वस्थ और प्राणवान बनाया जा सकता है। इसके लिए मंद एवं दीर्घ श्वास के प्रयोग के साथ नियमित प्राणायाम का अभ्यास आवश्यक है। श्वास के विभिन्न प्रयोगों से जीवन को संतुलित बना सकते हैं। ■

JSL

OMH

Lt. Shri Sagar Chand Jain Parivar
Moradabad

M/s Oswal Metal House

Bahtti Mohalla, Moradabad (U.P.)
Ph. 0591-2326747, 2429529

Sh. Dharam Pal Jain
Sh. Darshan Lal Jain
Sh. Ravi Kumar Jain
Sh. Amit Kumar Jain

Traders of all type of Non Ferrous Metal
Especially Copper, Brass & Aluminum Scrap.

&

Wholesale Dealer of
Jindal Stainless Steel Sheet and Coils.

oswalmetalhouse@gmail.com

Delhi Postal Regd No. DL(E)-20/5333/2010-2012
Date of Posting: 5 - 6 Every month

RNI No. DELBIL/2010/32807
October 2011

सुखी परिवार अभियान का एक विशिष्ट अनुष्ठान

महालक्ष्मी अनुष्ठान

आर्थिक संपन्नता के लिए

सुख-शांति एवं उन्नति के लिए

धनतेरस के उपलक्ष्य में भाग्योदय का एक दुर्लभ अवसर

साहित्य मनीषी आचार्य श्रीमद् विजय वीरेन्द्र सूरीश्वरजी म.सा. एवं
युवामनीषी गणिवर्य श्री राजेन्द्र विजयजी के मार्गदर्शन से
अनुभवी विधिकारकों द्वारा आयोजित

श्री यंत्र को स्वयं अपने हाथों से अभिमंत्रित एवं अभिमंडित करें

-: स्थान :-

श्री ठाकुरदास जैन श्वेताम्बर मूर्तिपूजक संघ
नैमानीवाड़ी सी.पी. टैंक, ठाकुरद्वार, मुंबई-400002

-: दिनांक एवं दिन :-

24 अक्टूबर 2011, सोमवार

भारतीय संस्कृति और धरोहर की चमत्कारी प्रस्तुति

एक बार अपनाएं, जीवन को खुशहाल बनाएं

महालक्ष्मी अनुष्ठान

(समय : प्रातः 9:00 बजे)

जो बनायेगा आपको सुखी, समृद्ध, यशस्वी, धनवान और सौभाग्यवान

माँ लक्ष्मी के अनुष्ठान को सफल बनायें, सुख, समृद्धि, खुशहाली और सफलता की कुंजी ले जायें

सम्पर्क : 9323195363, 9004721116, 9619018965

श्री राजमल जैन
अध्यक्ष

श्री महेन्द्र जैन करबावाले
संयोजन

Shri Thakurdwar Jain Shwetamber Murtipujak Sangh
Naimaniwadi, C.P. Tank, Thakurdwar, Mumbai - 400002
Phones : 022 - 22067630

If undelivered please return to:
Editor, Samridha Sukhi Pariwar, E-253, Saraswati Kunj Appartment, 25 I. P. Extension, Patparganj, Delhi-110092